चन्दामामा
सितम्बर १९८०

daCunha-LIC-90 HIN

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

इस महीने की बेताल कथा "यश की कामना" है। अनेक लोगों को महान कार्य करने की प्रेरणा यश की कामना से ही प्राप्त होती है। यशस्वी व्यक्ति किसी न किसी विद्या में सिद्धहस्त होते हैं। पर उन लोगों ने दूसरों का कभी अनुकरण न करके उस विद्या को उच्च शिखर पर पहुँचा दिया है।

अमर वाणी

अनाहूते प्रवेशश्चा, प्यपृष्टे बहुभाषणम्।
स्वास्तुतिश्च, स्वात्मवर्णस्य, इत्येवं मूर्खलक्षणम्॥

[बिना निमंत्रण के जाना, बिना परामर्श के ही अधिक बोलना, तथा आत्मस्तुति करना मूर्खों के लक्षण हैं।]

वर्ष : ३३ सितम्बर १९८० अंक : १

एक प्रति : १-५० : : वार्षिक चन्दा : १८-००

गाधि मुरली, नरसापुरम (आन्ध्र)

प्र.: भाषाओं की उत्पत्ति कैसे हुई? लिपि के बिना कुछ भाषाएँ कैसे पैदा हुईं? ऐसी भाषाओं में उत्तर और प्रत्युत्तर कैसे चलते हैं?

उत्तर: भाषा वस्तुओं, गुणों व क्रियाओं के लिए कुछ संकेतों का रूप है। अन्य प्राणियों की भांति मानव केवल सहज प्रेरणाओं से विकास को प्राप्त नहीं होता। उसके मस्तिष्क के परिणाम के आधार पर वह अपने परिसरों को बदलने का ज्ञान अनुभव के द्वारा संपादित कर सका है। परंतु उसका अनुभव दूसरों को प्राप्त होने के लिए कुछ संकेतों की आवश्यकता है। एक पौधा, कंद-मूल, फल या जानवर भी अगर खाने योग्य हैं, इस ज्ञान को कुछ मानव यदि अपने अनुभव के द्वारा प्राप्त करते हैं तथा उन खाने योग्य पदार्थों के नाम हों, तो वे नाम अपने आप प्रचारित होते हैं। उनके खाने योग्य होने की बात उन चीज़ों को न खानेवालों के लिए भी उपयुक्त ज्ञान बन जाता है।

भाषाओं के उद्भव के बाद ही लिपि का जन्म हुआ। लिपि भी एक कृत्रिम संप्रदाय है। 'सांप' कहकर अगर एक भाषा में चिल्लाते हैं, उस भाषा का ज्ञान रखनेवाला ही समझ पाता है कि उस प्राणी से खतरा है। इसी प्रकार लिपि का उपयोग भी उसके जानकार लोगों के लिए ही होता है।

लिपियों की वजह से भाषाओं का विस्तृत प्रचार होता है। जीवन में कभी एक-दूसरे को समक्ष न देखनेवाले भी चाहे वे हज़ारों मीलों की दूरी पर क्यों न हो, पत्र-व्यवहार के द्वारा मित्र तथा कभी कभी प्रेमी भी बन जाते हैं! अगर अंग्रेज़ी भाषा की लिपि नहीं होती तो क्या हम विश्व के कोने-कोने में घटित होनेवाले समाचारों को कुछ ही घंटों में जान सकते हैं? लिपि न होती तो क्या तार की सुविधा संभव हो पाती? लेकिन कुछ संदर्भों में भी लिपि के अभाव में भी दूर के प्रदेशों तक कुछ लोग अपना संदेश भेज पाते हैं। आफ्रिका की कतिपय जातियों के लोग एक प्रदेश की घटना को सैंकड़ों मील दूर बसे हुए लोगों तक डफलियों के द्वारा मंजिलों के आधार पर तार से भी अधिक गति के साथ भेजना संभव हो पाया है! इसी प्रकार अमेरिका के रेड इंडियन लोग धुएँ के द्वारा दूर के प्रदेशों तक संदेश भेज देते हैं, मगर उन डफलियों की आवाज़ और धुएँ के संकेत शीघ्र ही वायु में विलीन हो जाते हैं, मगर लिखित संदेशों की भांति स्थाई नहीं होते।

[८६]

अपराध का दण्ड

सिंहल द्वीप के राजा जीमूतवाहन का पुत्र कंदर्पकेतु असाधारण रूपवान था। एक दिन एक व्यापारी ने उसे यह विचित्र बात बताई कि हर चतुर्दशी के दिन समुद्र के मध्य में एक अपूर्व सुंदरी कल्पवृक्ष के नीचे आभूषण धारण कर एक शय्या पर बैठी दिखाई देती है।

कंदर्पकेतु के मन में उस सुंदरी को देखने की जिज्ञासा पैदा हुई। उस स्थान पर ठीक वक़्त पर पहुँचकर उसने उस अपूर्व सुंदरी को देखा। उस युवक को देखते ही वह सुंदरी समुद्र के भीतर उतर गई। उस सुंदरी के प्रति आकृष्ट हो कंदर्पकेतु समुद्र में कूद पड़ा और उसके नीचे पहुँच गया। उसने देखा, समुद्र तल में एक सोने के महल में विद्याधर नारियों के बीच वह सुंदरी एक सोने की शय्या पर बैठी हुई है।

उस सुंदरी ने कंदर्पकेतु को देख उसके पास एक विद्याधरी को भेजा। उसने कंदर्पकेतु से कहा—"हमारी सखी कंदर्पकेळि नामक विद्याधर राजा की पुत्री है। इसका नाम रत्नमंजरी है। इसने शपथ की है कि जो युवक उस पर मुग्ध हो साहस करके समुद्र में कूदकर इस सोने के महल में पहुँचेगा, उसी के साथ यह विवाह करेगी। इसलिए हमारी सखी आप के साथ विवाह करने को तैयार है।"

इस पर कंदर्पकेतु ने प्रसन्न होकर गांधर्व विधि से रत्नमंजरी के साथ विवाह किया। उन दोनों ने थोड़े समय तक सुख-वैभव का अनुभव करते हुए सोने के महल में अपना जीवन बिताया।

उस महल के एक चौपाल में रत्नमंजरी की एक स्वर्ण प्रतिमा थी । रत्नमंजरी ने कंदर्पकेतु को पहले ही सावधान कर रखा था–"आप भूल से भी कभी इस प्रतिमा का स्पर्श न कीजिएगा । ऐसा करने पर सर्वनाश होगा ।"

इसके बावजूद भी एक दिन रत्नमंजरी की अनुपस्थिति में कंदर्पकेतु ने उस प्रतिमा का स्पर्श किया। दूसरे ही क्षण उस प्रतिमा ने कंदर्पकेतु को जोर से लात मारी। तब वह सिंहल द्वीप में आ गिरा ।

मारण होम

श्रीपर्वत के समीप के ब्रह्मपुर में एक बार यह अफ़वाह फैल गई कि पर्वत के शिखर पर घंटाकर्ण नामक एक राक्षस पहुँच गया है । इस कारण लोग पहाड़ पर से सूखी लकड़ियाँ बीन कर लाने से भी डरते थे ।

वास्तव में बात यह थी कि घंटा को चुराकर भागनेवाले एक चोर को बाघ ने मार डाला । इस पर वह घंटा कुछ बंदरों के हाथों में पड़ गया । वे बंदर जब भी उत्साह में आ जाते, बजाया करते थे । इस कारण ब्रह्मपुर के निवासियों को जब-तब उस घंटे की आवाज़ सुनाई देती थी । लोग यह सोचकर डर के मारे ब्रह्मपुर को छोड़ भाग गये कि उस घंटे को घंटाकर्ण नामक एक राक्षस ही बजाया करता है । क्योंकि किसी ने यह अफ़वाह भी फैलाई कि वह राक्षस मनुष्य भक्षी है, जब भी वह किसी मनुष्य को पकड़कर खा जाता है, तब-तब वह घंटा बजाया करता है ।

राजा ने मुनादी करवाई कि जो व्यक्ति घंटाकर्ण का मारण होम करेगा, उसे एक हज़ार सोने के दीनार दिये जायेंगे ।

उस घंटे का रहस्य एक नर्तकी ने जान लिया । वह गुप्त रूप से अपने प्रेमियों से मिलने के लिए जब-तब उस निर्जन पहाड़ पर जाया करती थी । इसी संदर्भ में एक बार उसने घंटा बजानेवाले बंदरों को देखा ।

मुनादी सुनकर नर्तकी राजा के पास पहुँची, उसने बताया कि वह राक्षस का मारण होम कर सकती है। इसके बाद उसने रंगोलियों के द्वारा तंत्र बनाया, गणेशजी की पूजा करके तांत्रिक क्रियाएँ कीं। एक टोकरी भरकर बंदरों के वास्ते अच्छे फल ले पहाड़ पर पहुँची। उन फलों को उसने बंदरों के समीप फेंक दिया। बंदर घंटा को छोड़ फल लेने दौड़ पड़े। तब नर्तकी ने धीरे से घंटा अपने हाथ में लिया, चुपचाप पहाड़ पर से उतर आई। इसके बाद राजा के पास जाकर बोली–"महाराज, मैं घंटाकर्ण का मारण होम करके उसका घंटा ले आई हूँ। आइंदा आप को उस घंटे की आवाज़ सुनाई नहीं देगी।"

इसके बाद पहाड़ पर से घंटे की आवाज़ कभी सुनाई नहीं दी। राजा ने अपने वचन के अनुसार नर्तकी को एक हज़ार दीनार दे दिये।

घुंघरों का शौक

किसी देश में उज्वलक नामक एक रथ सारथी था। मगर उसके रथ को कभी किराया नहीं मिलता था। रथ हांकने का पेशा उसे लाभदायक न रहा।

उसने सोचा–"जिस पेशे से पेट नहीं भरता, जिस देश में जीना मुश्किल है, उस देश से क्यों लगे रहे? सारा संसार हमारी मातृभूमि है। जिंदगी बिताने के लिए
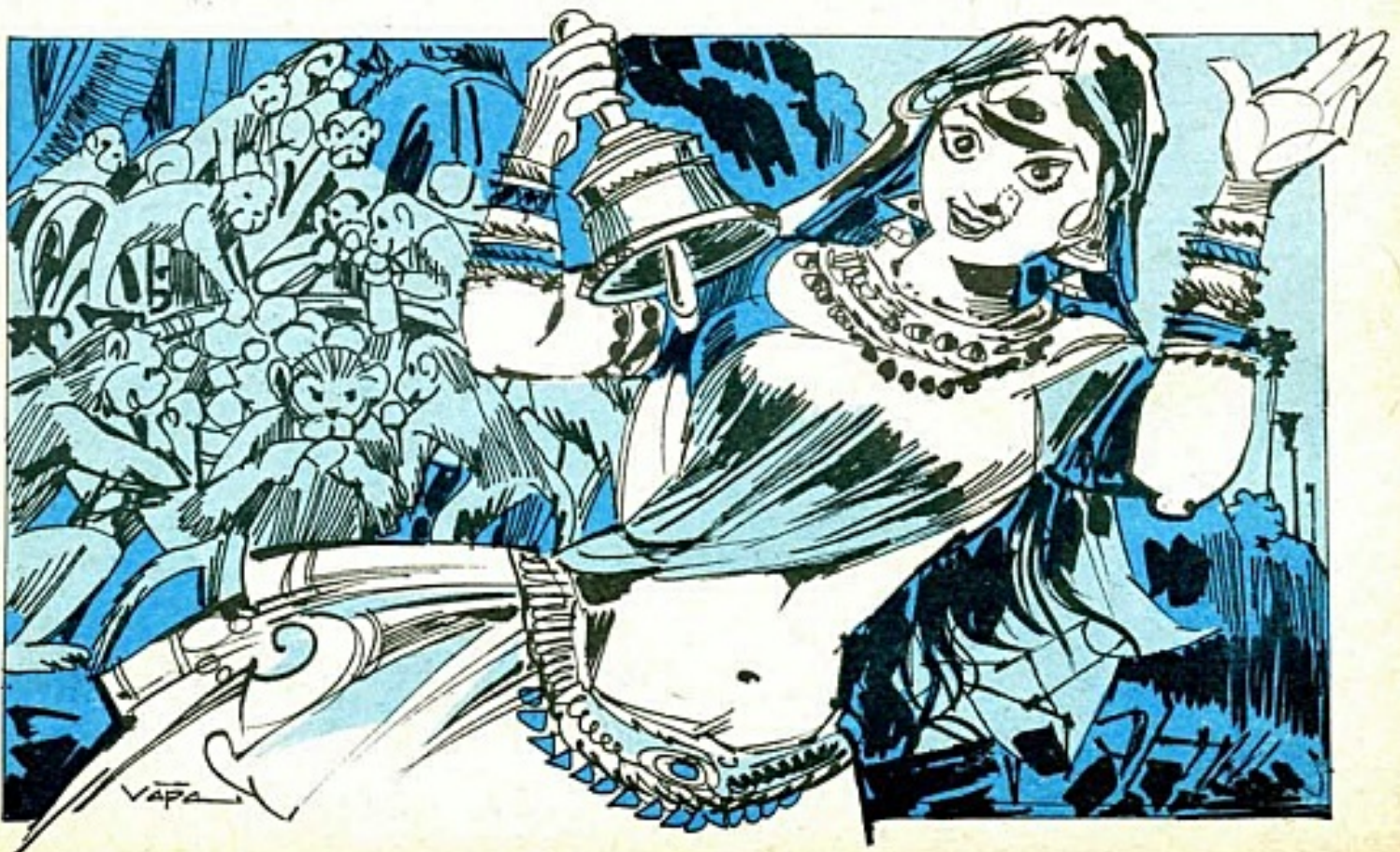
कोई भी पेशा कर सकते हैं।" यों विचार कर वह दूसरे देश के लिए चल पड़ा।

रास्ते में एक जंगल में उसे एक छोटी ऊंटनी मिली। उसे ब्याकर उसकी माँ अपने रास्ते चली गई थी।

वह उस उंटनी को घर ले आया, जंगल से घास लाकर उसे पालने लगा। वह ख़ूब मोटी-तगड़ी हो गई। बड़ी हो जाने पर उसने कई बच्चे दिये। वह उन ऊंटों को किराये पर देकर अपना पेट भरने लगा।

वह जब-तब रेगिस्तान से होकर राजस्थान और गुजरात की यात्रा करता था। छोटे ऊँटों को खरीदकर अपने दल में मिला देता था।

इस तरह उसने ऊंट के जिन बच्चों को खरीदा, उनमें एक बड़ा ही सुंदर था। इसलिए शौक में आकर उसने उस ऊंट के बच्चे के गले में चांदी के घुंघरु बांध दिये। जब वह चलने लगता, तब उसकी आवाज़ कानों को मधुर लगती थी। इस कारण ऊंट का वह बच्चा बड़ा घमण्ड करता था, इस पर और ऊंट इससे ईर्ष्या करते थे।

एक बार जब ऊंटों का दल जंगल में चरने गया, तब घुंघरोंवाला ऊंट पीछे रह गया। उत्साह के साथ उछलते-कूदते, खेलते वह ऊंट यह बात भूल गया।

एक बूढ़े ऊंट ने उसे पिछड़े पड़े देख चेतावनी दी—"तुम अकेले पीछे रह गये हो। सिंह और अन्य खूंख़्वार जानवर तुम्हारी हानि कर सकते हैं। तुम्हारे घुंघरों की आवाज़ उन्हें अपनी ओर आकृष्ट कर सकती है।"

फिर भी घुंघरोंवाले ऊंट ने उन बातों पर ध्यान न दिया। इसके बाद ऊंटों का दल आँखों से ओझल हो गया। साथ ही अंधेरा फैल गया। घुंघरोंवाला ऊंट रास्ता भटककर इधर-उधर दौड़ने लगा। उसके घुंघरों की आवाज सुनकर एक सिंह आया और उसे दबोचकर खा डाला।

[४]

[कुंड़लिनी राज्य की सेनाएँ अपना ख़ज़ाना भरने के ख़याल से पराये राज्यों पर हमला करने चल पड़ीं। उस वक्त उन्हें एक धूमकेतु दिखाई दिया। तूफान में फंसकर उनकी कुछ नौकाएँ डूब गईं। कुछ सैनिक एक द्वीप में पहुँचे। वहाँ पर वे लोग खूँख्वार जानवरों तथा एकाक्षी मांत्रिक से बचकर भागने लगे। बाद...]

सेनापति समरसेन तथा सैनिक भी थोड़ी दूर भागकर आखिर एक पहाड़ी प्रदेश में पहुँचे। अब उन्हें उस भयंकर एकाक्षी मांत्रिक का कंठ स्वर सुनाई नहीं दे रहा था। इसलिए वे यह सोचकर बहुत खुश हुए कि वे लोग अब ख़तरे से बच गये हैं। उनका पीछा करनेवाले चतुर्नेत्र के भेदिये काला उल्लू और नर वानर भी उनकी आँखों से ओझल हो गये। इस वजह से उन्हें थोड़ी मानसिक शांति प्राप्त हो गई।

पर अब उनके सामने यह सवाल पैदा हुआ कि उनका आगे का कर्तव्य क्या है? फिर से वे लोग किसी खतरे में फंसने के पहले उस मांत्रिकों के द्वीप से बचकर निकल तो जावे! मगर उसे छोड़कर जावे कैसे? वे अपनी नौकाओं को समुद्र में जहाँ छोड़ आये थे, वह दिशा किस ओर

है? नौकाओं में रहनेवाले सैनिक किसी खतरे के शिकार तो नहीं हुए हैं न? वास्तव में अब वे लोग उस द्वीप में किस दिशा में हैं? ये सारे सवाल उनके सामने थे।

समुद्र से घिरे महान जंगल के बीच दिशाओं का बोध कैसे हो? उस प्रदेश में जहाँ भी देखो, सर्वत्र पहाड़ और गगन चुंबी वृक्ष फैले थे। उन वृक्षों से लिपटी लताओं का समुदाय! वास्तव में दिशाओं का पता चले, तब न वे समझ सकते थे कि असल में वे हैं कहाँ?

ऐसी उलझनों में समरसेन फँसा हुआ था, उसी समय आसमान में बादल छंट गये और सूरज दिखाई दिया। सूर्य की गति को देख समरसेन ने भांप लिया कि वे लोग उस द्वीप में अब कहाँ हैं?

उसने अपने अनुचरों से कहा—"हम लोग इस मांत्रिक द्वीप में अब पश्चिमी दिशा में हैं। हमारे जहाज उधर पूर्वी तट पर हैं।"

"तब तो हमें किसी तरह से पूर्वी तट पर पहुँचना उचित होगा न?" एक सैनिक ने कहा।

"यह बात सही है, मगर पूर्वी तट पर पहुँचना वैसे आसान काम नहीं है। न मालूम हमें रास्ते में कितने खतरों का सामना करना होगा। यदि नाक की सीध में जाना चाहे, रास्ते में बड़े-बड़े पहाड़ और घने जंगल हैं, साथ ही खूँखार जानवरों का खतरा भी है। उनसे बचने पर ही तो हम पूर्वी तट पर पहुँच सकते हैं।" इन शब्दों के साथ समरसेन ने गहरी साँस ली।

अपने सेनापति के मन में यह निराशा देख सैनिकों के दिल बैठ गये। इसे भांपकर समरसेन ने अपने अनुचरों को समझाने के स्वर में झट कह दिया—"तुम लोगों के कहे अनुसार पूर्वी तट पर पहुँचना सब प्रकार से अच्छा मालूम होता है। मेरा भी यही विचार है, हम ऐसा

ही करेंगे। अब रही खतरों की बात! हमारे हाथों में तलवार हैं और कुंडलिनी देवी की कृपा भी हम पर भरपूर है। इनकी रक्षा जब तक हमारा कवच बनी हुई है, तब तक हमें चाहे किसी भी प्रकार की मुसीबतों का सामना करना पड़े, हम सुरक्षित रूप से अपने लक्ष्य तक पहुँच सकते हैं। चलो, तुम लोग निर्भय मेरे साथ चलो।" यों सैनिकों को चेतावनी देकर समरसेन आगे बढ़ा।

थोड़ी दूर चलने के बाद समरसेन हठात् रुक गया, तब बोला–"उफ़! तुम लोग रुक जाओ!" इन शब्दों के साथ उसने सैनिकों को इशारा किया। उसके अनुमान के अनुसार सामने एक भयंकर दृश्य दिखाई दिया। वह दृश्य बड़े-बड़े पराक्रमी वीरों को भी रोमांचित करने वाला था।

एक बहुत बड़ा अजगर उनके आगे थोड़ी दूर पर पेड़ की डालों से सरक रहा था! दो चीते इस तरह खड़े थे कि मानो उन पर अजगर के हमले करने की बात से वे बेख़बर हो।

समरसेन तथा अन्य सैनिकों के देखते अजगर धम्म से एक चीते पर हमला कर बैठा, अपने मुँह में उसका सर दबोचकर बिजली की गति के साथ उसके शरीर को

इसके बाद सब लोग एक दूसरे मार्ग पर आगे बढ़े। वह रास्ता पैदल चलने के लिए अनुकूल न था। पहाड़ों से झरनेवाले झरनों के जल से वह सारा प्रदेश कीचड़ से सना हुआ था। वहाँ पर जहाँ भी देखो, दूब, हरी घास, बाँस के घने झुरमुट फैले हुए थे। उनके बीच से रास्ता बनाकर उन्हें आगे बढ़ना था। उस बिकट स्थिति में सारे सैनिकों को सजग हो अपने प्राण हथेली पर रखकर आगे बढ़ना पड़ा। सेनापति समरसेन आगे रहकर उनका मार्ग दर्शन कर रहा था और बीच बीच में अपने सैनिकों को हिम्मत बंधा रहा था।

थोड़ी और दूर आगे जाने पर समरसेन ने अपने सैनिकों को बताया—"सुनो, यह सारा प्रदेश जलमय प्रतीत होता है। यहाँ पर जो तालाब हैं, उनमें जलजंतु अकसर आते होंगे। फिर भी जैसे हमें जंगली जानवरों का डर है, वैसे जल जंतुओं का डर नहीं है।"

समरसेन की बात पूरी न हो पाई थी कि बगल के झुरमुट में से एक गैंडा बाहर आया। उसे देखते ही सैनिक घबराकर इधर-उधर अपनी नज़र दौड़ाने लगे कि किस दिशा में भाग जाये! समरसेन ने उन्हें सचेत करते हुए कहा—"हमारा भाग

अपनी लपेट में ले लिया। इसे देख दूसरा चीता डर के मारे कांप उठा और फिर भाग खड़ा हुआ।

पल-दो पल के बीतने के पहले ही भागा हुआ चीता अपने साथी चीते को अजगर की पकड़ में से छुड़ाने के लिए करनेवाली कोशिश को देख जोर से गरज उठा और तेजी से आकर अजगर पर आक्रमण कर बैठा।

उस हालत में समरसेन ने सैनिकों को हिम्मत बंधाते हुए समझाया—"देखते हो न इनका भयंकर युद्ध! हमें सावधान रहकर आगे की यात्रा में भी ऐसी मुसीबतों से बचे रहना चाहिए!"

जाने का प्रयत्न करना ख़तरे से खाली नहीं है। तुम लोग एक के पीछे एक खड़े हो अपनी तलवारों को म्यान से निकालकर चौकन्ने होकर ज़रूरत पड़ने पर लड़ने को सन्नद्ध रह जाओ।"

गैंड़े ने अपना मुँह ऊपर उठाया। एक बार हुँकार कर पैर पटकने लगा। इसे देख सारे सैनिक भय कंपित हो उठे। सबने अपने नेता समरसेन का आदेश सुनने के लिए उनकी ओर दृष्टि दौड़ाई। समरसेन कुछ कहने जा रहा था, तभी गैंड़ा उनकी तरफ़ आक्रमण करने के ख़्याल से आगे बढ़ा।

सैनिकों के आगे खड़े समरसेन ने मौक़ा देख गैंड़े की पीठ पर सारी ताक़त लगाकर अपनी तलवार का वार किया। अगर कोई दूसरा जानवर होता तो उस वार की चोट से घायल हो चक्कर काटकर नीचे गिर जाता। मगर गैंड़े पर उस वार का कोई विशेष आघात न हुआ। पर उस प्रहार से डरकर गैंड़ा ऐसा गरज उठा कि सारा जंगल गूँज उठा। तब वह फिर से एक बार पैर पटककर सैनिकों पर आक्रमण कर बैठा।

पर इस बार सैनिक विचलित नहीं हुए। अपने नेता ने जो हिम्मत दिखाई थी, उसे देख उनकी हिम्मत दुगुनी हो गई। उन लोगों ने गैंड़े को घेरकर अपनी तलवारों से उसकी देह को छलनी बनाया।

गेंडा घायल होकर चिल्लाते हुए एक ओर लुढ़क पड़ा और छटपटाने लगा। तब समरसेन ने सैनिकों से कहा–"अब तो हम लोग इस खतरे से तो बच गये। पर इसका गर्जन सुनकर थोड़े और जानवर इस ओर आ सकते हैं। इस बीच हमें यहाँ से खिसक जाना ज़्यादा अच्छा होगा।" यों सावधान कर वह वहाँ से चल पड़ा।

थोड़ी दूर जाने पर उन्हें एक सरोवर दिखाई दिया। उसे देखते ही थके-मांदे सैनिकों ने सरोवर में उतर कर अपनी प्यास बुझानी चाही। उनमें से एक ने कहा–"ओह, इसका जल कैसा निर्मल है! इसमें स्नान करने पर मजा आएगा।"

इस पर समरसेन ने अपने अनुचरों को चेतावनी दी–"यह तो मांत्रिक द्वीप है! यह बात तुम लोग भूल मत जाओ। खबरदार!"

जो दो सैनिक प्यास के मारे परेशान थे, वे आगा-पीछा सोचे बिना उसी वक़्त सरोवर में उतर पड़े। तभी उन लोगों ने देखा कि उनके चारों तरफ़ का पानी हिल रहा है। उसी समय हठात् उन पर चार-पांच मगर-मच्छ एक साथ बिजली की गति के साथ आक्रमण कर बैठे। वे लोग डर के मारे चीख उठे। किनारे खड़े समरसेन और अन्य सैनिकों ने तीरों का निशाना लगाकर उन पर छोड़ दिया, फिर भी उन दो सैनिकों

को मगर-मच्छ सरोवर के बीच खींच ले गये ।

इस घटना ने सबकी हिम्मत तोड़ दी । समरसेन तथा अन्य चार सैनिक चिंतित हो वहाँ ज्यादा देर रुकना खतरे से खाली न समझकर वहाँ से चल पड़े । अब वे लोग बड़ी सतर्कता पूर्वक चलने लगे । थोड़ी दूर और आगे बढ़ने पर उन्हें एक बहुत बड़ा सरोवर दिखाई दिया ।

उसे देखते ही समरसेन के मन में यह संदेह पैदा हो गया कि इसे कैसे पार करे । समरसेन ने पानी में कंपन देख अनुमान लगाया कि सरोवर के किनारे कोई नहा रहा है । पर उसे किसी मानव की आकृति दिखाई नहीं दी । पास के पेड़ की एक डाल पर एक लंबी टोपी लटक रही थी । उस टोपी में मानव की आँखों जैसे दो विचित्र छेद थे ।

उस विचित्र को देख सारे सैनिक विस्मय में आ गये । समरसेन भी आश्चर्य में आ गया, पर उस प्रश्न का उत्तर वह सोच नहीं पा रहा था । सरोवर के पानी में अब भी कंपन हो रहा था । उस कंपन को देखने पर ऐसा लगता था कि आँखों को दिखाई न देनेवाला कोई व्यक्ति नहा रहा है ।

इसके बाद समरसेन और सैनिक भी एक झाड़ी के पीछे छिपकर बड़ी सतर्कता पूर्वक एकटक उस विचित्र को देखने लगे । समरसेन के मन में यह संदेह पैदा हुआ– "कहीं वह व्यक्ति मांत्रिक एकाक्षी तो नहीं है ?"

थोड़ी देर तक विचार करने के बाद समरसेन के मन में यह विश्वास जम गया कि यह एकाक्षी मांत्रिक न होगा । पर वह टोपी क्या है? यह भी उसकी नहीं होगी, तब तो यह क्या कोई और मांत्रिक है? यह संदेह उसके मन में पैदा हुआ ।

उसी समय सरोवर में से कोई बातें सुनाई दे॰ लगीं । स्नान करनेवाला

व्यक्ति कोई मंत्र जाप रहा था। उसके स्वर में एक प्रकार की कठोरता और गांभीर्य ध्वनित हो रहा था। तब समरसेन को लगा कि यह कोई असाधारण व्यक्ति होगा।

उसी वक़्त एक और डरावना दृश्य उन्हें दिखाई दिया। सरोवर के किनारे झाड़ों के पीछे से एक सांप का सर ऊपर उठ रहा है।

वह एक अनोखा जानवर था। उसकी आकृति एक साधारण हाथी से चार-पांच गुने अधिक बड़ी थी। पर ऐसे भारी जानवर का सर छोटा था।

सब लोग इस ख्याल से उस विचित्र जानवर की ओर एकटक देख रहे थे कि न मालूम क्या होनेवाला है! उस जानवर ने अपने पतले सिर को सरोवर के भीतर फैलाया। ऐसा लग रहा था कि वह उस अदृश्य व्यक्ति को पकड़ने की कोशिश कर रहा है।

उस अनोखे जानवर का सर पानी के स्तर से एक गज ऊपर तक पहुँचा ही था कि सरोवर के जल के भीतर से एक विकृत चीत्कार सुनाई पड़ा। उस चीत्कार के सुनने की देर थी, बस, पेड़ की डाल से लटकनेवाली लंबी व विचित्र आँखोंवाली टोपी नीचे सरक गई।

दूसरे ही क्षण सरोवर में एक आदमी उस आँखोंवाली टोपी को पहना दिखाई दिया। उस व्यक्ति को देखते ही अनोखा जानवर सरोवर के किनारे से भाग गया।

तब सरोवर का वह व्यक्ति चिल्लाकर बोला–"ओह! तुम हो महोदर! तुम मुझको ही निगलने आये हो? चतुर्नेत्र को निगलने की तुम्हारी यह हिम्मत!"

मांत्रिक चतुर्नेत्र को देखते ही समरसेन और अन्य सैनिक कांप उठे। एकाक्षी मांत्रिक का प्रबल शत्रु इस चतुर्नेत्र की आँख बचाकर अब कैसे भाग जाये? इसी ख्याल से वह चारों तरफ़ नज़र दौड़ाने लगा। (और है)
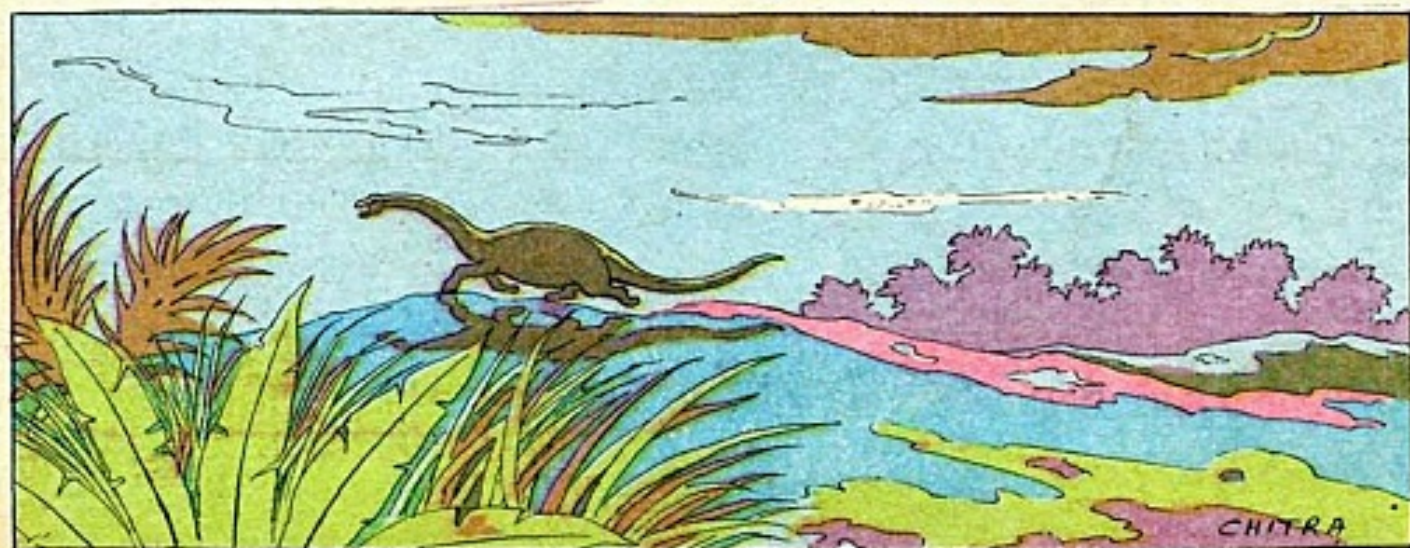
यश की कामना

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया, पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा–" राजन, अगर आप यह सारा श्रम यश की कामना से करते हैं, तो आप का यह प्रयत्न सही नहीं है, क्यों कि यश और प्रयत्न के बीच कोई संबंध नहीं है। यह बात श्रम करने के बाद उसका परिणाम जाननेवाले मुकुंद की कहानी से हमें अच्छी तरह मालूम हो जाती है। वह कहानी मैं आप को सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनिये।"

बेताल यों सुनाने लगा: मुकुंद एक गाँव के एक साधारण किसान का पुत्र था। पर वह असाधारण शक्ति रखता था। इस कारण उसे समस्त प्रकार की विद्याएँ प्राप्त हुईं, फिर भी उसे एक

बेताल कथाएँ

किसान के रूप में ही अपनी ज़िंदगी बसर करनी पड़ी ।

वैसे मुकुंद एक साधारण गाँव में ही निवास करता था, मगर वह गाँव एक जमाने में इतिहास प्रसिद्ध तीर्थ था। वहाँ पर अनोखे खण्डहर और शिलालेख प्रकट हुए थे । उन्हें देखने के लिए दूर-दूर प्रदेशों से महान व्यक्ति जाया करते थे । उन लोगों के साथ बातचीत करते वक़्त मुकुंद के मन में यह विचार पैदा हो जाता--"ये लोग बुद्धिमत्ता में मुझसे बढ़कर किसी भी हालत में नहीं हैं, मगर इन्हें ऐसा यश कैसे प्राप्त हुआ है?" फिर वह सोचता कि ऐसा यश मुझे भी प्राप्त हो जाता तो क्या ही अच्छा होता? उसने यह बात कई लोगों से खुद बता भी दी ।

एक वृद्ध व्यक्ति ने मुकुंद की यश की कामना को भांप लिया और समझाया-"अबे, इस कोने के गाँव में बैठे रहने से तुम्हारी बुद्धिमत्ता का मूल्य ही क्या होगा? अगर तुम नाम कमाना चाहते हो तो किसी नगर में क्यों नहीं चले जाते?"

ये बातें मुकुंद को लग गईं। उसके पिता के मना करने पर भी परवाह किये बिना वह नगर की ओर चल पड़ा ।

मुकुंद के रास्ते में एक भयंकर जंगल पड़ता था । उस रास्ते में अकेले यात्रा करने में कई लोग डरते थे । मगर मुकुंद को लगा कि उसके जैसे साहसी व्यक्ति को यों डरना अपमान की बात होगी । यों विचार कर मुकुंद अकेले ही जंगली रास्ते से चल पड़ा ।

जंगल के बीच एक डाकू ने उसे रोका। मुकुंद ने उसको हराया । डाकू ने आश्चर्य में आकर कहा-"मैं पिछले दस वर्षों से चोरियाँ करते आ रहा हूँ । मेरा नाम सुनते ही बड़े हिम्मतवर भी कलेजा फटने से मर जाते हैं, मगर तुम जैसे व्यक्ति को मैंने आज तक नहीं देखा है ।"

मुकुंद को जब मालूम हुआ कि उसके हाथों में हारनेवाला व्यक्ति मशहूर डाकू वीरेन्द्र है, वह अचरज में आ गया ।

उसने वीरेन्द्र से कहा–"मैं किसी भी तरह से यश प्राप्त करना चाहता हूँ। तुम मुझे भी चोरी करने का उपाय बता दो, हम दोनों दोस्त बन जायेंगे।"

मुकुंद की बात को वीरेन्द्र ने खुशी से मान लिया और कहा–"तब तो हम नगर में चले जायेंगे, वहीं पर मैं तुम्हें चोरी करने के सारे रहस्य सिखला दूंगा।"

इसके बाद वे दोनों नगर में पहुंचे। वीरेन्द्र ने चोरी करने के लिए एक मकान को चुना। रात के वक़्त दोनों उस मकान के अहाते को लांघकर भीतर पहुंचे। वीरेन्द्र ने मकान के पिछवाड़े के किवाड़ों को बड़ी युक्ति के साथ बाहर से ही खोल दिया। उसके हर कार्य को मुकुंद बड़ी लगन के साथ परखने लगा।

इसके बाद दोनों तिजोरीवाले कमरे में पहुंचे। वीरेन्द्र ने युक्ति के साथ तिजोरी खोल दी, उसके भीतर से गहने व रुपये निकालकर पोटली बनाई।

वहां से जब दोनों निकलने को हुए, तब दीवार पर टंगी एक औरत की तस्वीर पर वीरेन्द्र की दृष्टि पड़ गई। वह एक दम चौंक पड़ा। वहां पर सोनेवाले आदमियों को देखते ही वीरेन्द्र ने अपनी पोटली को वहीं पर छोड़ दिया और मुकुंद के साथ खाली हाथ चुपचाप बाहर चला आया। इस पर मुकुंद ने खीझकर डाकू से पूछा–"यह भी कैसी चोरी है? तुमने मेहनत करके जो कुछ चुराया, उसे वहीं पर छोड़ आये?
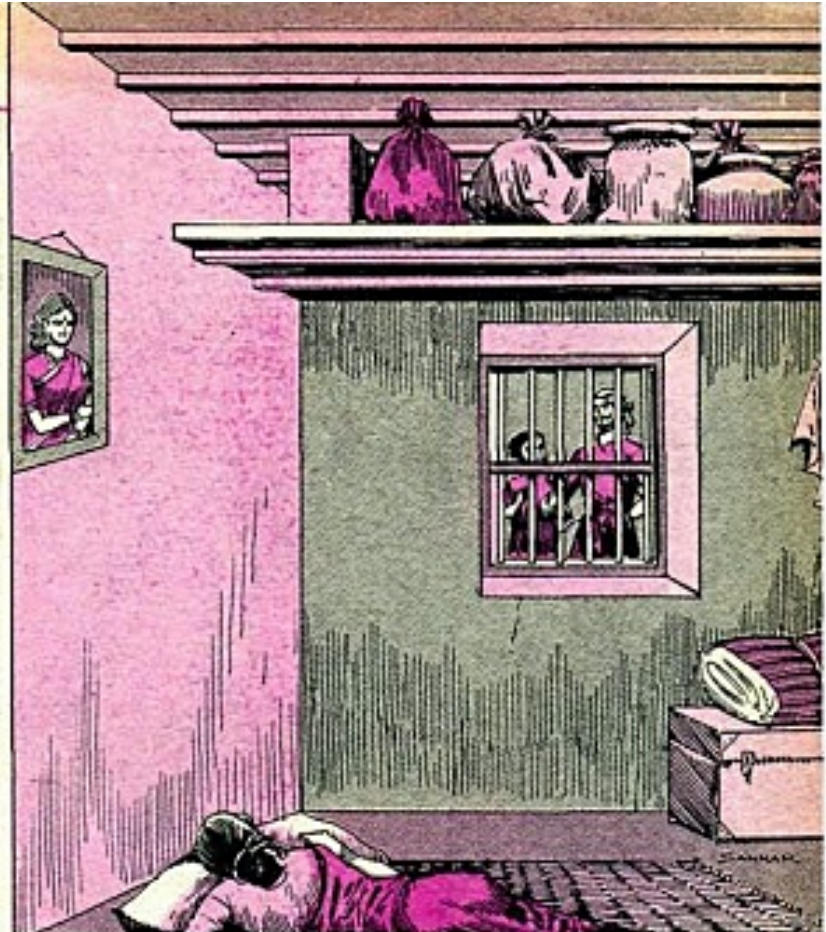
चोर ने कहा–"एक बार मैं जंगल में बुरी तरह से घायल हो मौत की घड़ियां गिन रहा था। उस वक़्त उधर से एक औरत एक गाड़ी में अपने मायके जा रही थी, वह मुझ पर रहम करके उस गाड़ी में अपने मायके ले गई, मेरा इलाज कराकर मुझे बचाया। यह मकान उसके पति का है। मेरा यह नियम है कि जो मेरी जान बचाते हैं, उनकी एक कौड़ी भी चुराना नहीं चाहिए।"

मुकुंद ने सोचा कि वीरेन्द्र जैसे खब्ती के साथ उसे सीखने को कुछ नहीं है। तब वह उसे छोड़कर कहीं चला गया।

इसके बाद मुकुंद यह सोच ही रहा था कि उसे उस नगर में कहाँ बसेरा लेना है, तभी अचानक न्यायाधिकारी शरश्चन्द्र के साथ उसकी मुलाक़ात हो गई।

न्यायाधिकारी का यह नियम था कि अकेले भोजन नहीं करना है। वह रोज किसी मेहमान को अपने साथ खाने के लिए बिठाया करता था। एक दिन मुकुंद उसे मेहमान के रूप में मिल गया। उसने मुकुंद की हालत जानकर बताया कि वह जब तक स्थाई रूप से अपना कोई निवास न बनाये, तब तक वह उसी के घर पर रहा करे।

उस नगर में चक्रधर नामक एक महान वीर था। मुकुंद ने सोचा कि उस बीर को हराने पर उसे भी महान बीर की ख्याति प्राप्त होगी। मगर मुकुंद ने तत्काल चक्रधर का सामना नहीं किया, बल्कि उसकी आदतें जान लीं।

चक्रधर रोज शाम को अपने बगीचे में अकेले ही टहला करता है। एक दिन मुकुंद ने चक्रधर के बगीचे में गुप्त रूप से प्रवेश किया और अचानक तलवार खींचकर उस पर हमला किया।

चक्रधर ने अचरज में आकर पूछा— "तुम कौन हो?"

"मैं तुम्हें हराकर तुमसे भी बढ़कर महान वीर कहलाने के ख्याल से आया हुआ हूँ।" मुकुंद ने जवाब दिया।

"ऐसी हालत में तुम छिपकर क्यों आये? सब के सामने तुम यह घोषणा कर सकते थे न?" चक्रधर ने पूछा।

"सब लोगों के सामने हार जाना मुझे कदापि पसंद नहीं है। इसके पूर्व में तुम्हारी सामर्थ्य जानने के लिए आया हूँ।" मुकुंद बोला।

फिर क्या था, झट से चक्रधर ने म्यान से तलवार खींचकर मुकुंद पर हमला

किया। कुछ ही मिनटों में मुकुंद ने चक्रधर को बेहथियार कर डाला।

चक्रधर ने विस्मय में आकर कहा–"लगता है कि तुमने किसी गुरु के यहाँ विद्या नहीं सीखी। सहज ही तुम्हें यह विद्या प्राप्त हो गई है। तुम मेरे साथ मैत्री भाव से रहोगे तो मैं तुम से कुछ पैंतरे सीखना चाहता हूँ।"

"इससे मेरा क्या फ़ायदा होगा?" चक्रधर ने पूछा।

"तुम्हें मैं प्रति दिन एक सौ सिक्के दूँगा।" चक्रधर ने कहा।

महान व्यक्ति कहलाने के लिए धन सब से बड़ा साधन है, इसलिए मुकुंद ने चक्रधर के यहाँ काम करने को मान लिया।

दो महीनों के अन्दर चक्रधर ने मुकुंद से बढ़कर कौशल दिखाया, फिर मुकुंद की नौकरी छूट गई। पर वह इससे दुखी न हुआ। क्योंकि उसके हाथ छे हजार सिक्के जमा हो गये थे। मुकुंद ने सोचा कि उस धन से व्यापार करके यश कमाया जा सकता है। यों विचार कर उसने हीरालाल की सलाह माँगी। हीरालाल एक बड़े व्यापारी के रूप में पहले ही मशहूर था। उसकी सलाह से मुकुंद भी व्यापार करके साल भर में लखपति बन गया। इस पर हीरालाल ने मुकुंद को सलाह दी–"मुकुंद! तुम्हें जो नफ़ा हुआ है, उसमें दसवाँ हिस्सा दान करके यश कमा सकते हो।"

मुकुंद लखपति तो बन गया, पर उसे ऐसा न लगा कि उसे यश प्राप्त हो गया है। इसलिए उसने हीरालाल की सलाह को अमल न किया। तब उसने व्यापार छोड़कर चित्रलेखन और संगीत का अभ्यास किया। फिर भी उसे यश प्राप्त न हुआ।

उन्हीं दिनों में मुकुंद का पिता नगर में आया। अपने पिता को देख मुकुंद ने आश्चर्यपूर्वक पूछा–"पिताजी, अचानक इस नगर में आप का आना कैसे हुआ?"

"इस साल मैंने हमारे खेत में फी एकड़ तीस मन धान पैदा किया। मैं

इधर कई सालों से जो प्रयत्न कर रहा था, वह इस साल सफल हुआ । राजा ने मेरा सम्मान करने के लिए बुला भेजा है ।" मुकुंद के पिता ने जवाब दिया ।

मुकुंद ने राजसभा में अपने पिता का सम्मान होते अपनी आँखों से देखा, उसे बड़ा आनंद हुआ । इसके बाद वह अपने पिता के साथ गाँव पहुँचा, पहले की तरह खेती का काम करने लगा । उस दिन से उसने यश पाने की अपनी इच्छा त्याग दी ।

बेताल ने यहाँ तक कहानी सुनाकर कहा—"राजन, मुकुंद ने यश प्राप्त करने की कामना क्यों त्याग दी ? क्या इसलिए कि वह यश पाने की सामर्थ्य नहीं रखता है ? या अपने पिता को देखते ही उसे घर की हवा लग गई ? उसने जो जो प्रयत्न किये, सब में अपने को श्रेष्ठ साबित करवाया है न ? ऐसी हालत में यश पाने के प्रति उसके मन में निराश क्यों पैदा हो गई ? इन संदेहों का समाधान जानकर भी न देंगे तो आप का सिर फट जायगा ।"

इस पर विक्रमार्क ने यों जवाब दिया—"मुकुंद की भूल यह थी कि उसने कुछ ही क्षेत्रों में यश प्राप्त करना संभव माना । वह तो लगभग सभी क्षेत्रों में यश पाने की सामर्थ्य रखता है । मगर सच्चा यश प्राप्त कर उसे स्थाई रूप देने की साधना और क्रम पद्धति का उसमें अभाव है । जब उसके पिता ने कृषि के क्षेत्र में सारे देश में अग्रणी के रूप में नाम कमाया, तभी मुकुंद को अपनी भूल मालूम हुई । यश पाने के वास्ते उसे इतने प्रदेशों का चक्कर लगाने और इतने सारे क्षेत्रों में प्रयत्न करने की बिलकुल जरूरत न थी । अगर उसके भीतर निष्ठा और लगन हो तो अपने घर बैठे-बैठे किसी क्षेत्र में प्रयत्न कर यश कमा सकता है । इसी विश्वास से वह अपने पिता के साथ घर लौट गया ।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो फिर पेड़ पर जा बैठा ।

(कल्पित)
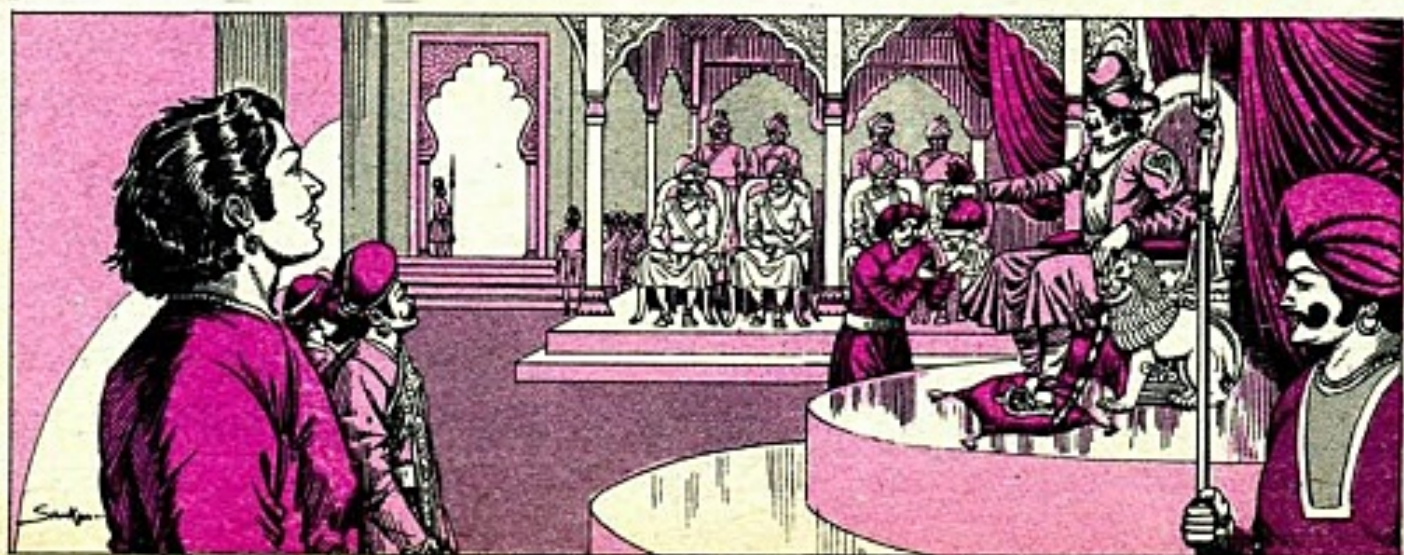
साहब और चोर

रामसिंह के दादा पर दादा डाकुओं के रूप में बहुत ही मशहूर थे, इस वजह से रामसिंह भी डाकू के रूप में ही अपनी ज़िंदगी बसर करते आया। रामसिंह के गजाधर नामक एक लड़का था। रामसिंह जब बूढ़ा हो गया, तब उसने सोचा कि अपने बेटे को चोरी करने व डाका डालने की कला सिखाकर वह आराम करे। लेकिन अपने पिता की सलाह के अनुसार गजाधर ने चोरी करने के पेशे को स्वीकार करने से अस्वीकार किया।

गजाधर ने अपनी आजीविका के लिए कोई दूसरा मार्ग अख्तियार करना चाहा, यह निर्णय करके काम की खोज में वह सारा गाँव छानता रहा। आखिर नागराज नामक एक धनी सज्जन ने गजाधर को पहरेदार का काम सौंप दिया। गजाधर ने छे महीने तक यह काम किया।

नागराज के पास दो क़ीमती हीरे थे। दूर के एक देश में ऐसे हीरों की बड़ी मांग थी। ऐसे ही रत्न सोमदास के यहाँ चार और थे। नागराज ने सोचा कि वे छठों हीरे उस देश में भेज दे तो अच्छे दाम मिल जायेंगे। मगर सोमदास ने जिस मूल्य पर उन हीरों को खरीदा था, उनसे थोड़ा ज्यादा लाभ लेकर नहीं बेचेगा। इसलिए उसने सोचा कि उन हीरों की चोरी करनी चाहिए।

यों विचार कर नागराज ने गजाधर को समझाया—"सुनो, सोमदास के पास चार क़ीमती हीरे हैं। उन्हें तुम चुराकर लाओगे तो तुम्हें अच्छा इनाम मिलेगा।"

"सरकार, मैं तो एक डाकू के वंश में ही पैदा हुआ हूँ। मेरे पिता का भी यही पेशा है, मैं उस पेशे में प्रवेश करना नहीं चाहता था, इसीलिए आप के यहाँ पहरेदार

धनीराम श्रीवास्तव

के रूप में काम करता हूँ। मैं यह काम नहीं कर सकता। मुझे माफ़ कीजिएगा।" गजाधर ने जवाब दिया।

इस पर नागराज ने आश्चर्य और क्रोध प्रकट करते हुए कहा—"क्या कहा? तुम डाकू के वंश में पैदा हो गये हो? यह बात मुझे अगर पहले मालूम हो जाती तो क्या मैं तुम्हें नौकरी देता? तुम अभी से यह काम छोड़कर चले जाओ।"

गजाधर अपना काम छोड़ चला गया।

इस घटना के दूसरे ही दिन सोमदास नागराज के घर आया और बोला—"सुनो भाई, मैं व्यापार के काम से एक महीने के लिए बाहर जा रहा हूँ। इधर चोरियाँ ज़्यादा होने लगी हैं। ये चारों हीरे तुम अपने घर रखो और मेरे लौटने के बाद मुझे दे दो।" यों कहकर चारों हीरे नागराज के हाथ सौंपकर सोमदास चला गया।

थोड़े दिन बाद सोमदास ने नागराज के घर आकर अपने हीरे वापस मांगे।

नागराज ने थोड़ा भी संकोच किये बिना सोमदास से कहा—"तुमने मुझे हीरे कब दिये? क्यों दिये? कम से कम तुमने मुझसे रसीद तो ले ली होगी न? क्या तुम्हारे पास ऐसा कोई सबूत भी है?"

सोमदास ने नागराज की ओर क्रोध भरी दृष्टि दौड़ाई, तब बोला—"गजाधर ने जब बताया कि तुम्हारी बुद्धि टेढ़ी है, तब मैंने उसकी बात पर यक़ीन नहीं किया। इस बात की जांच करने के लिए ही मैंने अपने हीरे तुम्हारे हाथ दे दिये। वे हीरे गजाधर ने कभी के तुम्हारे पास से लाकर मुझे दे दिये हैं। लो, देखो ये हीरे।" इन शब्दों के साथ सोमदास ने अपनी जेब से हीरे निकालकर दिखाये और बोला—"अब मुझे मालूम हो गया कि तुम किस तरह के स्वभाव के हो। मैं सब को तुम्हारी दुष्ट बुद्धि का परिचय देता हूँ।" यों कहकर सोमदास चला गया। इसके बाद सोमदास ने गजाधर को अच्छी तनख़्वाह देकर अपने यहाँ पहरेदार नियुक्त किया।

शाप का फल

रमाबाई और शांताबाई के बीच गहरी दुश्मनी थी। एक दिन रमाबाई गाय ख़रीदने के लिए हाट में जा रही थी, तब शांताबाई ने कहा–"तुम क्या गाय ख़रीदने जा रही हो? पगली, तुम जो रुपये ले जाती हो, वे भी खोकर लौट आओगी!" शांताबाई का विचार था कि ऐसा कहने पर उसका शाप लग जाएगा।

पर रमाबाई शांताबाई की बातों की अनसुनी करके हाट में चली गई। शाम को उसे खाली हाथ लौटते देख शांताबाई ने सोचा कि उसका शाप लग गया है, वह छिड़ाने के स्वर में बोली–"खाली हाथ लौट आई? हाँ, कहा भी है न, जो बोते हैं, सो काटते हैं।"

"शांता, बात कुछ ऐसी नहीं। मैं हाट में छे सौ रुपयों में गाय ख़रीदकर लौट रही थी, हमारे पड़ोसी गाँव के साहूकार उसे देख रीझ गया। एक हज़ार रुपयों में ख़रीदने की इच्छा प्रकट की। मैंने सोचा कि चार सौ रुपये का नफ़ा हो रहा है, क्यों न बेच दूं? बेचकर रुपये लेकर लौट रही हूँ। तुमने जो कहा, जो बोते हैं, वही काटते हैं, वह होकर ही रहा।" यों कहकर रमाबाई अपने घर चली गई।

मूर्ख दामाद

जगतराम एक गरीब किसान था। अपनी दो कन्याओं की शादी करके वह अपनी रही-सही संपत्ति से भी हाथ धो बैठा। शादी के खर्च में सारी जमीन-जायदाद सर्फ़ हो गई तो एकाध बीघा जमीन, बैल गाड़ी और बैल बच गये।

शादियों के संपन्न हुए अभी छे ही महीने बीतने को थे कि दीपावली त्योहार आ पड़ा। पर्व के दिन बेटियों और दामादों को घर बुला लाने की जगतराम की पत्नी ने सलाह दी। जगतराम ने अपनी पत्नी की सलाह सुनकर सर तो हिलाया, पर वह सचमुच उन्हें निमंत्रण देना नहीं चाहता था।

मगर छोटी बेटी के मन में अपने पीहर जाने की लालसा पैदा हुई, उसने अपने पति को दीपावली पर्व पर ससुराल जाने को उकसाया।

इस पर छोटे दामाद ने कहा–"तुम्हारे पिता ने निमंत्रण नहीं भेजा, हम बिना बुलाये मेहमान कैसे बन सकते हैं?"

"हमें हमारे पिताजी को बुलाने की ज़रूरत ही क्या है?" छोटी बेटी ने कहा। यह तर्क सुनकर छोटे दामाद ने मान लिया।

इसी तरह जगतराम की बड़ी बेटी ने भी अपने पति को पर्व के लिए अपने पीहर जाने को तैयार किया। पहले बड़े दामाद ने मना किया। तब बड़ी बेटी ने समझाया–"मान लीजिए, मेरे पिताजी ने अपने छोटे दामाद को पर्व के उपहार दिये हैं, तब आप को वे उपहार न मिले तो क्या मेरी बेइज्ज़ती न होगी?"

ये बातें सुनने पर बड़े दामाद का स्वाभिमान जाग उठा और वह भी अपनी पत्नी के साथ ससुराल के लिए चल पड़ा।

केदारनाथ पांडेय

पर्व के दिन अपने दोनों दामादों और बेटियों को एक साथ आ धमकते देख जगतराम हैरान हो गया। मगर उसकी पत्नी यह सोचकर मन ही मन खुश हो गई कि उसके पति ने उसकी बात रखने के लिए सब को चुपचाप बुला भेजा है।

पर्व तो जैसे-तैसे बीत गया। मगर जगतराम ने अपने दामादों को उपहार देने का विचार प्रकट नहीं किया। इसे देख दोनों दामाद गलत फ़हमी में पड़ गये कि एक की आँख बचाकर वे दूसरे दामाद को उपहार देना चाहते हैं। उनके संदेह के सबूत के रूप में जिस दिन वे सब अपने गाँव लौटनेवाले थे, उस दिन जगतराम किसी से कुछ कहे बगैर कहीं चले गया।

बड़ी बेटी ने एकांत में अपनी माँ को चेताया कि उसके पति को पर्व के उपहार मिलने चाहिए। माँ तो संकट में पड़ गई, बोली—"तुम्हारे पिता अनाज बेचकर तुम्हारी शादी का क़र्ज चुकाने के बाद कुछ बच रहा तो शायद उपहार दे।"

ये बातें ओट में खड़ी छोटी बेटी ने सुन लीं। उसने भी जल्दी जल्दी जाकर माँ को उपहार की बात याद दिलाई।

"तुम्हारे पिता बैल बेचकर तुम्हारी शादी का खर्च चुकाने के बाद कुछ बचेगा तो शायद भेंट-उपहार दे। पर यह बात मैं नहीं जानती।" माँ ने कहा।

ये बातें अपनी-अपनी पत्नियों द्वारा जामाताओं ने जान लीं। बड़े दामाद ने
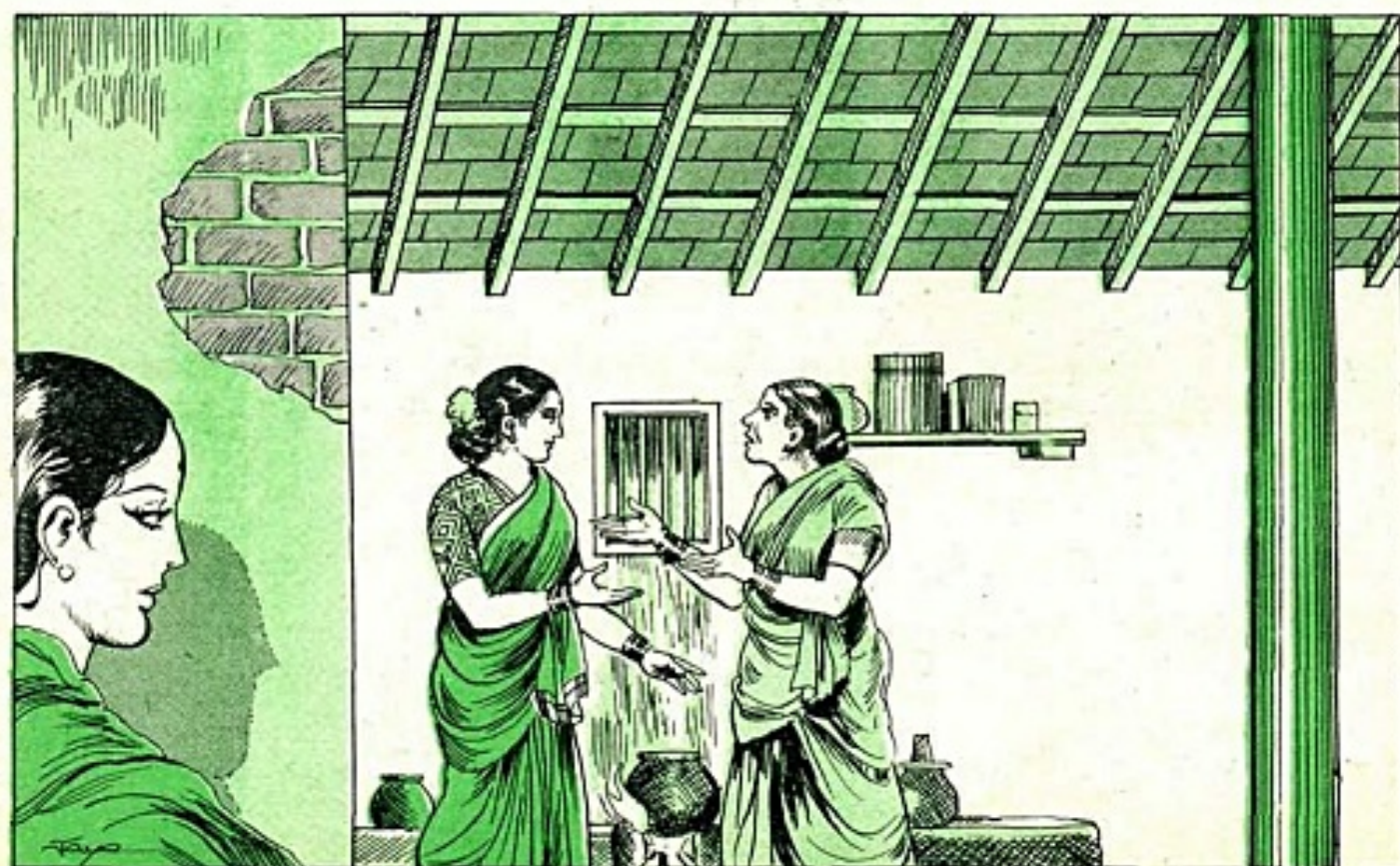
गाड़ी में बैल जोते, गाड़ी पर अनाज के बोरे लाद लिये, तब हाट की ओर चल पड़ा। तभी मौक़े पर छोटा दामाद कहीं से दौड़ा-दौड़ा घर आ पहुँचा और गाड़ी में जा बैठा।

गाड़ी हाट में पहुँची। तब बड़ा दामाद धान बेचने के लिए शहर में एक तरफ़ चल पड़ा तो छोटा दामाद बैल बेचने के लिए दूसरी ओर; मगर दोनों सौदा करना बिलकुल जानते न थे।

अनाज के व्यापारियों ने बड़े दामाद को घेरकर धान की बिक्री का भाव पूछा।

बड़े दामाद ने थोड़ी देर तक कोई हिसाब लगाया, जो भाव मुँह में आया, कह डाला। इस पर सारे व्यापारी खिल-खिलाकर हँस पड़े। उसने बोरों की बिक्री का भाव नहीं बताया, फ़ुटकर भाव बताया। बड़ा दामाद समझ न पाया कि व्यापारी क्यों हँस रहे हैं। उसने उन्हीं लोगों से पूछा—"बताइये, आप लोग किस भाव से धान खरीदेंगे?"

व्यापारियों के मन में यह संदेह पैदा हुआ कि वह यह धान चोरी करके लाया है। इस पर उसे सिपाहियों के हाथ सौंप दिया।

उधर छोटे दामाद की भी यही गत हो गयी। बैल के सौदागरों ने आकर बैलों का दाम पूछा तो उसने बगल में बैठे घी के व्यापारी की सलाह मांगी। इस पर सौदागरों ने सोचा कि वह बैल चुरा लाकर बेचना चाहता है, उन लोगों ने भी छोटे दामाद को सिपाहियों के हाथ पकड़ा दिया।

आख़िर जगतराम को अपने दामादों की यह करनी मालूम हो गई। सिपाहियों के हाथों से अपने दामादों को छुड़ाते उसका बड़ा बुरा हाल हो गया। वास्तव में वह अपने दामादों को कोई न कोई उपहार देने के ख़याल से रुपये उधार लाने के लिए पड़ोसी गाँव में गया था, जो कुछ लाया, वह सिपाहियों के हाथों से अपने दामादों को छुड़ाने में ही स्वाहा हो गया।

स्वर्ण पात्र

पाँच कल्पों के पूर्व बोधिसत्व सेरिव नामक राज्य में एक बर्तन बेचनेवाले व्यापारी के रूप में अपना जीवन बिताया करता था। वह पुराने बर्तन ख़रीदता और नये बर्तन बेचता था। इस व्यापार में बोधिसत्व न्यायोचित लाभ ही लिया करता था।

उसी राज्य में बर्तन बेचने व खरीदने वाला एक और व्यापारी था। वह पक्का कंजूस था। बोधिसत्व और वह व्यापारी भी मिलकर ही व्यापार किया करते थे।

एक बार वे दोंनों तेलिवाहा नामक नदी को पार कर आन्ध्रपुर पहुँचे। वे दोनों एक-दूसरे के व्यापार में दख़ल न दे, इस विचार से नगर की गलियों को समान रूप से बांटकर व्यापार करने चल पड़े।

आन्ध्रपुर में एक व्यापारी का परिवार था। वह परिवार एक जमाने में संपन्न था, पर अब निर्धन हो चुका था। उस परिवार में एक कन्या, एक बूढ़ी नानी तथा उनकी दरिद्रता बच रही। वे दोनों मज़ूरी करके अपना पेट पालती थीं।

उनके पास कई बर्तन थे। उनमें से एक सोने का पात्र था, जिसका उपयोग उस परिवार का प्रधान व्यापारी अपने जीवन काल में किया करता था। उसका उपयोग न करने के कारण उस पर मैल जम गई थी, इस कारण वे दोनों औरतें समझ न पाईं कि वह पात्र असल में सोने का है।

कंजूस व्यापारी गलियों में "पणिक चाहिए? या मणिक चाहिए?" चिल्लाते उन औरतों के मकान के पास पहुँचा। पणिक माने हार और मणिक माने मिट्टी के पात्र हैं। यह चिल्लाहट सुनकर छोटी लड़की ने बूढ़ी से पूछा—"माँ, मुझे कुछ ख़रीदकर दे दो न?"

"बेटी, मैं तुम्हें क्या खरीदकर दे सकती हूं? हमारे पास बचा ही क्या है?" माँ ने जवाब दिया।

"हमारे पास एक पुराना बर्तन है न? उसे देकर खरीदवा दो न?" बेटी ने कहा। इस पर उस औरत ने कंजूस व्यापारी को घर के भीतर बुलाया, उसे बिठाकर उसके हाथ बर्तन देकर कहा—"बेटा, तुम इसे लेकर अपनी बहन के वास्ते कोई चीज़ दे दो।"

कंजूस व्यापारी ने उस बर्तन को देखा, उसे लगा कि यह बर्तन ज़रूर सोने का है। उसने उस बर्तन को उलट-पलटकर देखा, लोहे की छड़ी से खरोंचकर जांच की। तब इस निर्णय पर पहुँचा कि वह सोने का ही है। उसने अपने मन में उस बर्तन को सस्ते में हड़पने का दृढ़ निश्चय कर लिया। तब बोला—"बहन, इस बर्तन को कुछ मिलेगा ही क्या? इसकी क़ीमत तो नहीं के बराबर है।" फिर उस पात्र को वहीं फेंककर उठकर चला गया।

बोधिसत्व और कंजूस व्यापारी ने पहले जो समझौता कर लिया था, उसके अनुसार एक के किसी गली में हो आने के बाद दूसरा जाकर अपना व्यापार कर सकता था। इस निर्णय के अनुसार बोधिसत्व थोड़ी देर बाद यह पुकारते उन औरतों के मकान के पास पहुँचा—"मणिक चाहिए?"

यह पुकार सुनकर बेटी ने अपनी माँ से कहा—"माँ, मुझे कुछ खरीदकर दे दो न?"

"बेटी, हमारे घर में उस पुराने पात्र को छोड़ और बचा ही क्या है? एक व्यापारी उसे किसी काम का न बताकर फेंककर चला गया है न? मैं और कौन चीज़ देकर तुम्हें कुछ खरीदकर दे दूं" माँ ने कहा।

"माँ, वह व्यापारी भले आदमी जैसे नहीं लगते! उद्दण्ड मालूम होते हैं! इस व्यापारी का कण्ठ देखो न, कैसे सौम्य मालूम होता है!" बेटी ने कहा।

इस पर माँ ने बोधिसत्व को घर के भीतर बुलाया और वह पात्र उसके हाथ थमा दिया। बोधिसत्व ने उस पात्र को देखते ही समझ लिया कि वह सोने का पात्र है, बोला—"बहन, इस पात्र का मूल्य एक लाख मुद्राओं का है। इसके मूल्य की चीज़ें मेरे पास नहीं हैं।"

"बेटा, एक और व्यापारी इसे कौड़ी के बराबर का भी नहीं है, बताकर चला गया है। शायद यह सोने का बर्तन हो, हम क्या जाने? तुम इसे लेकर इसके बदले में कुछ दे जाओ।" बूढ़ी ने कहा।

बोधिसत्व ने अपनी थैली से पाँच सौ चांदी के सिक्के और पाँच सौ चांदी के सिक्कों के मूल्य के बर्तन उस औरत के हाथ सौंप दिया, तब कहा—"बहन, आठ चांदी के सिक्के, थैली और तराज़ू को छोड़ बाक़ी सारी चीज़ें व सिक्के तुम्हें

सौंप देता हूँ, ले लो।" इन शब्दों के साथ सारी चीज़ें उन्हें दे दीं और वह सोने का पात्र लेकर चला गया।

बोधिसत्व ने अपने पास जो आठ चांदी के सिक्के रख लिये थे, वे उसे नदी को पार करने के लिए किराये के काम आये।

इसके बाद कंजूस व्यापारी फिर उन औरतों के मकान के पास पहुँचा और उनके प्रति बड़ी दया व त्याग करनेवाले के स्वर में बोला–"सुनो, वह पुराना पात्र देकर इनमें से कोई एक चीज़ ले लो।"

बूढ़ी औरत का क्रोध उमड़ पड़ा। उसने उस कंजूस व्यापारी से कहा–"भाई, तुमने तो एक लाख मुद्राओं के मूल्य के बर्तन को एक कौड़ी के बराबर नहीं बताया। एक और धर्मात्मा ने आकर इसके बदले में एक हज़ार मुद्राओं का मूल्य चुकाया और उसे ले गया है।"

यह बात सुनते ही कंजूस को लगा कि उसका दिमाग खराब हो गया है।

"क्या एक लाख मुद्राओं के मूल्य के बर्तन को उसने हड़प लिया है? और मुझे इतना भारी नुक़सान पहुँचा दिया है?" यों कहते वह आवेश में आ गया। इस कारण उसका मतिभ्रमण हो गया। तब वह रोते हुए अपने माल के साथ मुद्राओं को भी वहीं पर छोड़कर तराजू हाथ में ले नदी के तट की ओर दौड़ पड़ा। उसके वस्त्र भी छूट गये थे, इस बात का भी उसे ख्याल न था। नदी के तट पर पहुँचकर उसने देखा कि बोधिसत्व नौका में नदी को पार कर रहा है।

कंजूस ने नौका को वापस लाने को पुकारा, पर बोधिसत्व ने मना किया। बोधिसत्व के उस पार पहुँचने पर कंजूस का क्रोध और बढ़ गया। उसका कलेजा तेजी के साथ धड़कने लगा। उसके मुँह से खून निकल आया। अधिक द्वेष के कारण उसका कलेजा फट गया और उस कंजूस व्यापारी ने वहीं पर दम तोड़ दिया।

इसके बाद बोधिसत्व ने दान-पुण्य करते अपना शेष जीवन बिताया।

बुद्ध का प्रस्थान

बुद्धत्व प्राप्त करने के बाद सिद्धार्थ जन्म और मृत्यु के बंधनों से मुक्त हो निर्वाण पाने की स्थिति में थे। लेकिन मानव जाति को पीडित अवस्था और अज्ञात रूपी अंधकार में पड़े देख उन्होंने निर्वाण पाने का अपना विचार बदल डाला और जनता में ज्ञान बोध करने का संकल्प किया।

सर्व प्रथम बुद्ध अपने को त्यागकर चले जानेवाले अपने पुराने शिष्य पाँच तपस्वियों की खोज में चल पड़े। उन्होंने उन्हें वाराणसी के समीप के एक वन में देखा। उन लोगों ने पहले बुद्ध की परवाह नहीं की; लेकिन जब वे उनके समीप आये तब विवश हो अप्रयत्न ही उन लोगों ने बुद्ध को प्रणाम किया।

इसके बाद बुद्ध का शिष्य बननेवाला व्यक्ति एक धनिक पुत्र यश है। इसे देख यश का पिता क्रोध में आ गया और अपने पुत्र को ले जाने के लिए बुद्ध के पास पहुँचा। बुद्ध ने थोड़ी देर तक यश के पिता से बात की। इस पर वह भी बुद्ध का शिष्य बन गया।
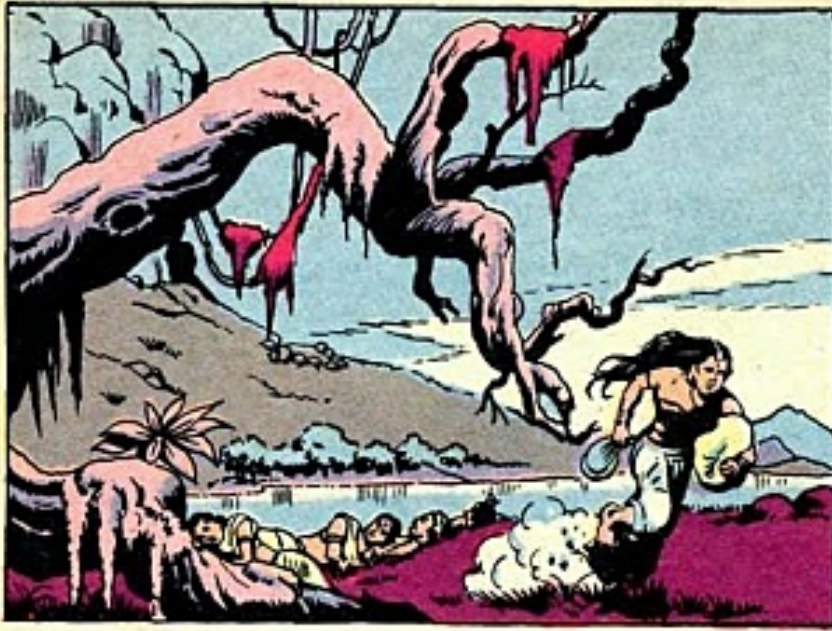
एक सरोवर के किनारे संपन्न पविवारों के कुछ युवक अपनी पत्नियों के साथ विहार कर रहे थे। उनमें से एक ब्रह्माचारी अपने साथ एक नर्तकी को ले आया था। जब वे सभी लोग सो रहे थे, तब वह नर्तकी सब लोगों के आभूषण चुराकर भाग गई।

इसके बाद वे युवक नींद से जाग उठे और उस नर्तकी को पकड़ने के लिए चल पड़े। रास्ते में बुद्ध से उनकी मुलाक़ात हो गई। बुद्ध ने उन लोगों को पूछा—"भाइयो, यह बताओ कि नर्तकी का अन्वेषण करना उत्तम कार्य है या अपनी अपनी आत्माओं का अन्वेषण करना?" इस पर वे अपने अज्ञान को त्याग कर बुद्ध के शिष्य बन गये।

उरुवेल के पास कस्सप (कश्यप) नामक प्रसिद्ध तपस्वी अपने पाँच सौ शिष्यों के साथ निवास करता था। उसे इस बात का बड़ा अहंकार था कि वह महान ज्ञानी है। उसको बुद्ध ने अपने मत का उपदेश दिया और उसके साथ उस तपस्वी के शिष्यों को भी अपने शिष्य बनाये।

इसके बाद कस्सप तथा उसके शिष्यों ने अपनी जटाओं को काटकर नदी में फेंक दिया। उस नदी से कई योजनों की दूरी पर दो और तपस्वियों के शिष्य नदी में स्नान कर रहे थे। उन लोगों ने नदी में बहकर आनेवाली जटाओं को देखा। उनका कुतूहल बढ़ गया। वे लोग उरुवेल तक आये और बुद्ध के साथ ही रह गये।

इसके बाद बुद्ध की ख्याति चारों तरफ़ फैल गई। अपने असंख्य शिष्यों को साथ लेकर बुद्ध राजगृह पहुँचे। महाराज बिंबिसार ने बुद्ध का आदर पूर्वक स्वागत किया और उन्हें बढ़िया आतिथ्य देकर अपने हाथों से उन्हें खिलाया।

बुद्ध के पिता शुद्धोदन ने उन्हें कपिलवस्तु में आने का निमंत्रण अपने दूतों के द्वारा भेजा। पर जो दूत उन्हें लिवा लाने गये, वे लौटकर नहीं आये। वे बुद्ध के साथ ही रह गये। फिर भी बुद्ध कपिलवस्तु में आये। उनके पिता, उनकी सौतेली माँ तथा अन्य लोगों ने उनका भारी स्वागत किया।

यहाँ तक कि राजपरिवार के सभी लोग बुद्ध को देखने आये, पर उनकी पत्नी यशोधरा नहीं आई। उसने कहा–"अगर मैं उनकी दया की पात्र हूँ तो वे स्वयं मेरे पास आ जायेंगे।" वास्तव में वह भी सन्यासिनी की ही ज़िंदगी बिता रही थी। अंत में बुद्ध यशोधरा देखने को पहुँचे।

बुद्ध के सन्यास लेने पर कपिलवस्तु में उनके ज्ञाति आनंद को राजा बनाने की तैयारियाँ हो रही थीं। उसी दिन उसका विवाह भी होनेवाला था। कपिलवस्तु में उत्साह उमड़ रहा था। राजा व वर बननेवाला आनंद सजकर तैयार था।
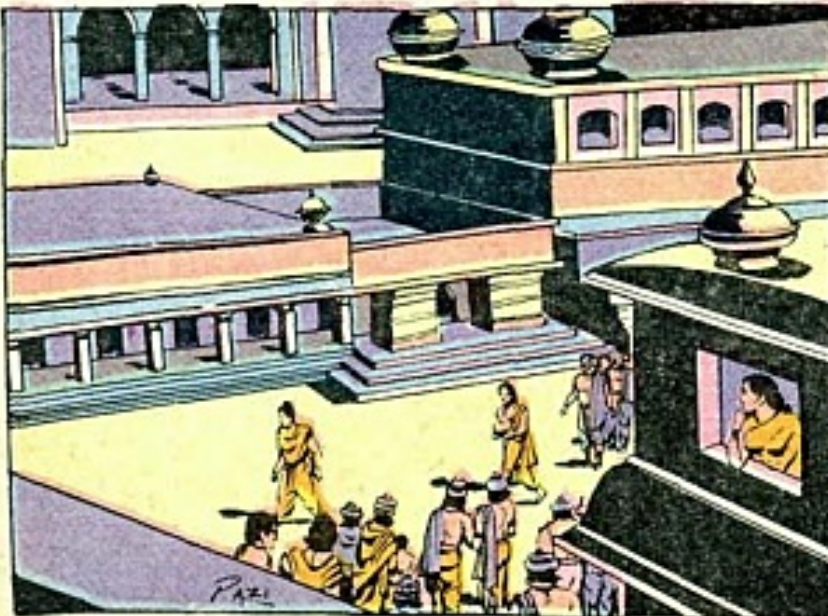
उस वक्त आनंद बुद्ध के आशीर्वाद लेने आ पहुँचा। बुद्ध उसके हाथ में अपना भिक्षा पात्र देकर प्रयाण हुए। आनंद भी उनके साथ चल पड़ा। आनंद की पत्नी इस दृश्य को खिड़की में से देखकर रो पड़ी। पर बुद्ध ने अपना भिक्षा पात्र वापस नहीं लिया, आनंद भी उसे बुद्ध के हाथ लौटा नहीं पाया, इसलिए उनके पीछे चल पड़ा।

आत्म-संतोष

नारायणसिंह पहली बार राजधानी नगर में गया। प्रथम दिन गायकों ने अद्भुत ढंग से अपना संगीत सुनाया। नारायणसिंह भी उस संगीत को सुन तन्मय हो उठा। पर उसे इस बात की चिंता हुई कि वह संगीत में प्रवीण नहीं बन सका। दूसरे दिन कवियों ने अपनी अच्छी अच्छी कविताएँ सुनाईं, पर कुछ कवियों की रचनाएँ नारायणसिंह की समझ में आ गईं, फिर भी वह वैसी कविताएँ रच नहीं पाता है, इस बात का उसे बड़ा दुख हुआ। तीसरे दिन शिल्प और चित्रों का प्रदर्शन हुआ। नारायणसिंह को लगा कि वह अपनी ज़िंदगी भर एक छोटा-सा चित्र भी खींच नहीं पाया, इस बात पर वह हताश हो गया।

उत्सवों के समाप्त होने पर नारायणसिंह जब अपने गाँव लौटने लगा, तब राजधानी की गलियों में उसने लूले, अंधे व बहरे को देखा, उन पर नारायणसिंह को दया आ गई। वह सोचने लगा कि कहीं दूर के गाँव से आकर वह संगीत, साहित्य, शिल्प और चित्रकला का आनंद लुटा पाया, पर ये लोग राजधानी में रहकर भी उसका आनंद उठा नहीं पाये।

इस बात की याद आते ही उसे यह आत्म-संतोष हुआ कि कम से कम वह उन लोगों से तो बेहतर है।

अलगाई

एक गाँव में एक व्यापारी था। उसके दो बेटे थे। छोटा बेटा जब पड़ोसी गाँव में गया था, तब व्यापारी की मौत निकट आई। उसने अपने बड़े बेटे को बुलाकर समझाया—"बेटा, अब मैं ज़्यादा देर ज़िंदा नहीं रह सकता। मेरे मरने के बाद भी तुम दोनों मिल-जुलकर रहो। छोटा गरम मिजाज़ का है। तुम जैसे-तैसे निभाते चलो।" यों कहकर व्यापारी ने अपने प्राण त्याग दिये।

छोटे की पत्नी ने देखा कि उसका ससुर जेठ से कुछ कह रहा है। मगर उनकी बातें उसके कानों में न पड़ीं। शाम तक छोटा भाई लौट आया। दोनों ने अपने पिता की अत्येंष्टि ने क्रियाएँ कीं।

इसके बाद छोटे की पत्नी ने उससे पूछा—"क्या तुम्हारे बड़े भाई ने तुम से कुछ कहा?"

"किसके बारे में?" छोटे ने पूछा।

"क्या तुम बिलकुल कुछ नहीं जानते? मरने के पहले ससुर और जेठ कुछ फुस-फुस करते रहें। शायद ससुर ने कहीं धन गाड़ रखा हो और उसका रहस्य जेठ को बता दिया हो। ससुरजी ने तुम से कुछ नहीं कहा था, इसीलिए मुझे शक हो रहा है।" छोटे की पत्नी ने कहा।

"मेरे भाई ऐसे नहीं हैं।" छोटे ने कहा।

"लेकिन धन के मामले में यह कहना मुश्किल है कि कौन किस तरह के स्वभाव का है?" छोटे की पत्नी ने शंका प्रकट की।

वास्तव में वह दोनों भाइयों का मिल-जुलकर रहना बिलकुल पसंद नहीं करती थी। जब तक ससुर ज़िंदा रहे, तब तक वह दोनों भाइयों के बीच फूट डाल नहीं पाई। अब तो ससुर न रहे और साथ ही

रेवती सरन

दोनों के बीच फूट पैदा करने के लिए उसे एक मौक़ा भी मिल गया। उसने अपने पति के दिल में जो जहर का बीज बोया, वह दिन ब दिन बढ़ने लगा।

एक दिन छोटे ने अपने बड़े भाई से पूछा—"मैंने सुना है कि पिताजी ने मरने के पहले आप से कुछ कहा है! क्या बात है वह?"

"अरे, कहने को क्या रह गया? बस, यही कहा कि उनके मरने के बाद भी हम इसी तरह मिल-जुलकर रहे।" बड़े ने बताया।

पर छोटा भाई यह जवाब सुनकर संतुष्ट नहीं हुआ। साथ ही उसकी पत्नी उसके असंतोष को बढ़ाती गई। एक दिन उसने अपने बड़े भाई से अलग-अलग गृहस्थी बसाने की बात बताई।

बड़े भाई ने आश्चर्य में आकर पूछा—"भैया, ऐसी ज़रूरत ही क्या आ पड़ी है?"

छोटे ने अपने बड़े भाई के प्रति अपनी शंका प्रकट की। बड़ा भाई अवाक् रह गया। आखिर वह एक निर्णय पर पहुँचा। अपनी पत्नी के बदन के सारे गहने ले जाकर महाजन से पूछा कि वह उन गहनों को गिरवी रखकर ज्यादा से ज्यादा जो कुछ दे सकता है, दे दे। महाजन ने उसे रुपये दिये।

महाजन का बेटा बड़े भाई का बचपन का दोस्त था। इसलिए उसने पूछा—"दोस्त, यह बताओ कि तुम्हें इतने सारे रुपयों की क्या ज़रूरत आ पड़ी?"

बड़े भाई ने असली कारण बताने में संकोच किया। इस पर महाजन के बेटे ने रुष्ट होकर पूछा—"दोस्त, मुझ से भी छिपाने के लिए ऐसा रहस्य ही क्या है?"

"तो सुनो, मगर एक शर्त है मेरी। तुम यह रहस्य कहीं प्रकट मत करो। मेरे छोटे भाई के मन में यह संदेह पैदा हो गया है कि मेरे पिताजी ने मरते बक़्त मुझे गड़े ख़जाने का रहस्य बता दिया है। इस कारण से वह अपनी गृहस्थी अलग

बसाने को तैयार हो गया है। उसके लिए आवश्यक खजाने की सृष्टि मैं ही करके हमारे पिताजी की अंतिम इच्छा के अनुसार हम दोनों मिल-जुलकर रहने का इंतज़ाम करूँगा।" इन शब्दों के साथ बड़े ने अपनी योजना बताई।

इसके बाद बड़े ने वे सारे रुपये एक थैली में रखकर बांध दिया। आधी रात के वक़्त पिछवाड़े में एक जगह गड्ढा खोदकर उसमें रुपयों की वह थैली गाड़ दी।

दूसरे दिन उसने छोटे से कहा—"भैया, मैं तुम्हें एक बात बताना चाहता हूँ। पिताजी ने मरते वक़्त गड़े खजाने की बात बताकर उसे हम दोनों को बराबर बांटने की सलाह दी है। लेकिन धन के लोभ में पड़कर मैंने यह बात तुम्हें नहीं बताई। मगर रात को पिताजी ने सपने में दर्शन देकर मुझे खरी-खोटी सुनाई, यह भी बताया कि मैंने जो गलती की, उसके दण्ड के रूप में वह सारी रक़म तुम को ही दूं। साथ ही हम दोनों मिल-जुलकर न रहे तो उनकी आत्मा को शांति न मिलेगी।"

इस पर छोटे ने कहा—"अरे, यह तो बड़े ही आश्चर्य की बात है! रात को मुझे भी पिताजी ने दर्शन देकर समझाया है—'अरे, तुमने अपने बड़े भाई को गलत समझा कि वह लोभी है। तुम्हारे मन में उसके प्रति जो गलत फ़हमी है, उसे दूर करने तथा संयुक्त परिवार को सदा के लिए बनाये रखने के लिए अपनी पत्नी के गहने गिरवी रखकर रुपये लाये हैं और उन्हें पिछवाड़े में गाड़कर तुम्हें सौंपना चाहता है। अब भी सही तुम अपने विचार बदलकर उससे क्षमा मांग लो।'

छोटे की बातें सुनकर बड़ा भाई चकित रह गया। बड़े को आश्चर्य चकित देख छोटा भाई बोला—"भाई साहब, कल शाम को महाजन के बेटे ने मुझे सारी बातें बताई हैं। साथ ही मुझे बुरी तरह से डांट भी दिया है। अब मेरी अक़्ल ठिकाने लग गई। आइंदा हम अलग नहीं होंगे।"

भावुकता

पुराने जमाने में अनंत नामक एक जमीन्दार था। उसकी जो भी प्रशंसा करता उसे सच मान बैठता था। एक बार वह अपने इष्ट मित्रों के साथ अपनी पालकी में बैठकर वन-भोज करने चला। दुपहर तक सबने खाना खा लिया।

अनंत ने कहा—"सुनते हो न? दूर पर स्थित उस समुद्र के गर्जन में मंदहास सुनाई दे रहा है। यहाँ के वट वृक्ष से बहनेवाली वायु में संगीत सुनाई दे रहा है।"

"आप तो बड़े भावुक हैं न?" एक ने चारण के ढंग पर कहा। बाक़ी लोगों ने "हाँ, हाँ, आप बिलकुल सच कह रहे हैं।" कहते तालियाँ बजाईं।

उनमें से एक ने पालकी ढोनेवाले कहारों की ओर मुड़कर जमीन्दार की प्रशंसा पाने के ख्याल से पूछा—"क्यों बे, तुम लोगों को समुद्र के गर्जन में हँसी और बरगद की हवा में संगीत सुनाई नहीं देता?"

"नहीं सरकार! भूख के मारे हमारे कान के पर्दे ढक गये हैं और हमारे पेट की आंतड़ियों की गुर्राहट तक हमें सुनाई नहीं देती।" एक कहार ने नीरस स्वर में उत्तर दिया। तब जाकर जमीन्दार साहब को याद आ गई कि कहारों ने खाना नहीं खाया है और अपनी भावुकता छोड़ उन्हें खाने का इंतज़ाम किया।

भोला दामाद

गंगाबाई के विन्ध्याचल नामक एक पुत्र था। वह भोला था। पितृहीन विन्ध्याचल के पास धन की कमी न थी, लेकिन वह पढ़ाई में कच्चा निकला। उसके कई रिश्तेदारों ने अपनी कन्याओं का विवाह विन्ध्याचल के साथ करना चाहा, मगर अपने प्रयत्न में असफल हो यह प्रचार करने लगे कि विन्ध्याचल पागल है। गंगाबाई ने भी रिश्तेदारों की लड़कियों को अपनी बहू बनाने से इसलिए इनकार किया कि रिश्तेदार विन्ध्याचल के प्रति थोड़ा भी आदर का भाव नहीं रखते, बल्कि उसकी संपत्ति देख उसके साथ अपनी लड़कियों की शादी करना चाहते हैं।

अपनी उम्र के जवानों की शादियाँ होते देख विन्ध्याचल भी शादी करने को मचल उठा और अपनी माँ को तंग करने लगा कि जल्दी उसकी शादी का इंतजाम करे। विन्ध्याचल की माँ भी शादी के प्रयत्न तो करती थी, पर रिश्तेदारों ने विन्ध्याचल को पागल बताते जो प्रचार किया, उसके अनुरूप विन्ध्याचल भी लोगों से ऐसे बुतुकी सवाल कर बैठता था, जिनसे लोगों की शंका और बढ़ जाती थी।

गाजीपुर में गोकुलदास की कन्या रमाबाई के साथ रिश्ता पक्का करने के ख्याल से चलते वक़्त गंगाबाई ने विन्ध्याचल को कई तरह से समझाया कि वहाँ पर लोगों के साथ उसे कैसे बर्ताव करना है।

गाजीपुर पहुँचते ही उनके वास्ते रास्ते में इंतज़ार करनेवाला गोकुलदास गंगाबाई और विन्ध्याचल को लेकर अपने घर की ओर चल पड़ा। रास्ते में उन्हें एक जगह रोककर एक मकान के अन्दर चला गया।

इतने में एक कन्या उस मकान के भीतर से आई और ड्योढी पर खड़ी हो

जगदीश प्रसाद

गई। उस सुंदर युवती को देख विन्ध्याचल ने पूछा—"क्या तुम्हीं रमाबाई हो?"

गंगाबाई ने जब देखा कि विन्ध्याचल उस मकान के दर्वाजे पर खड़ा है जिसके भीतर गोकुलदास चला गया था, इस पर उसने पूछा—"बेटा, तुम वहाँ क्यों खड़े हो?"

विन्ध्याचल ने सारी बात बताई। इस पर गंगाबाई ने कहा—"तुमने गलती की। कहीं ऐसा भी पूछा जाता है?"

इस बीच गोकुलदास उस मकान से बाहर आया और उन्हें अपने घर ले गया। खाना खाने के बाद एक युवती को देख विन्ध्याचल ने गोकुलदास के पुत्र गोपाल से पूछा—"क्या वही रमाबाई है?"

गोपाल हँस पड़ा और कोई उत्तर दिये बिना चला गया। इसके बाद कन्या को दिखाने का कार्यक्रम शुरू हुआ। कोई युवती आकर उनसे थोड़ी दूर पर खड़ी हो गई।

"क्या वही रमाबाई है?" विन्ध्याचल ने पूछा।

इसके उत्तर में गोकुलदास मुस्कुरा उठा। थोड़ी देर बाद वेणी में फूल गूँथे, नई साड़ी धारण किये एक मोटी युवती को लाकर उनके सामने चटाई पर बिठाया गया। उस युवती को लिवा लानेवाली एक औरत युवती की बगल में बैठ गई।
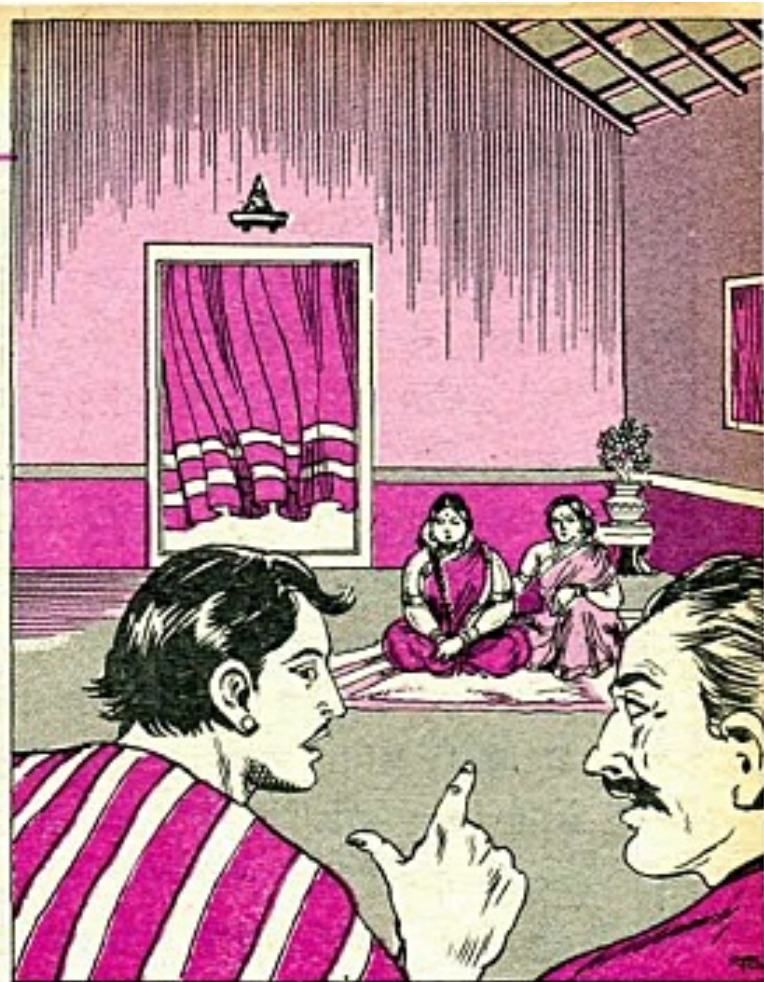
इस पर विन्ध्याचल ने गोकुलदास से पूछा—"सुनिये तो, यह क्या? दुलहिन की जगह उसकी माँ को सजाकर ले आये हैं?"

"विन्ध्याचल, बगल में बैठी हुई औरत दुलहिन नहीं, दुलहिन की माँ है; मेरी पत्नी है।" गोकुलदास ने कहा।

विन्ध्याचल ने उस मोटी युवती को दिखाकर धीरे से गोकुलदास से पूछा—"वह युवती कौन है?"

"वही दुलहिन है।" गोकुलदास ने कहा।

"ओह! यह लक्कड़ जैसी युवती मुझे नहीं चाहिए।" विन्ध्याचल ने कहा। फिर अपनी माँ से बोला—"माँ, लक्कड़ जैसी इस युवती से मैं कतई शादी नहीं करूँगा।"

गोकुलदास ने हँसकर कहा—"विन्ध्याचल, तुम मेरे लिए योग्य दामाद हो।"

"यह तो सरासर धोखा है, दगा है! गोकुलदासजी, मैं इस मोटी युवती के साथ शादी नहीं करूँगा।" विन्ध्याचल ने अपना निर्णय साफ़-साफ़ बताया।

गोकुलदास हँसकर बोला—"डरो मत, यह युवती दुलहिन नहीं! बात असल में यह है कि जब तुम लोग मेरे घर मेरी कन्या को देखने आ रहे थे, तब तुम्हारे गाँव के कुछ लोगों ने आकर तुम्हारे बारे में अंट-संट बातें बताईं। इस बात की सचाई जानने के लिए मैंने तुमसे कई सवाल पूछे। पर तुम्हारे व्यवहार में तथा बातचीत में भी मुझे कोई कमी दिखाई नहीं दी। रास्ते में मैं एक मकान के पास रुककर उसके भीतर चला गया था। उस मकान के दर्वाजे पर तुमने जिस कन्या को देखा, वह मेरी बेटी रमाबाई है। वह उस वक़्त किसी काम से उस मकान में गई थी। दुलहिन को जल्दी देखने की तुम्हारे मन में आतुरता देख तुम्हारे बारे में सही जानकारी पाने के ख्याल से हमने यह नाटक रचा है।"

"दामाद के साथ यह खेल कैसा?" विन्ध्याचल ने अपना रोष प्रकट किया।

गंगाबाई ने कहा—"भाई साहब! कम से कम अब तो सही, आप मेरे बेटे के बारे में अच्छी तरह समझ गये हैं न?"

"बहन, उसमें क्या ऐब है? इसीलिए हमेशा यह रिवाज अच्छा होता है कि कन्या की शादी के वक़्त कन्या-दान करने या ग्रहण करते समय दूसरों की बातों पर ध्यान दिये बिना स्वयं देख लेना हमेशा अच्छा होता है।" गोकुलदास ने कहा।

इस बीच रमाबाई को सजाकर वहाँ पर लाया गया। उस कन्या को देख गंगाबाई प्रसन्न हो उठी। विन्ध्याचल की खुशी का कोई ठिकाना न रहा। पर गोकुलदास यह सोचकर संतुष्ट हुआ कि उसके दामाद के बारे में जैसे लोग भोला व पागल समझते हैं, वह सच नहीं है।

राक्षसों का गुरु

आनंद अनाथ बालक था। वह मुखिये के घर सारे काम संभालता रहा। गीत गाने का उसे बड़ा शौक था। गाते गाते वह सारे काम मिनटों में कर देता था। रात के वक़्त मवेशीखाने में वह पयाल बिछाकर लेट जाता, आधी रात तक गाकर तब वह सो जाता। पर आनंद का स्वर फटी बांस जैसा भर्राया हुआ था, साथ ही कर्ण कठोर था। उसके गीत मुखिये और उसकी पत्नी के लिए भी उबा देनेवाले थे। फिर भी आनंद कामचोर न था, इस कारण वे लोग आनंद के गीत सुनकर भी सहन कर लेते थे।

आनंद अच्छी तरह से जानता था कि उसके गीत सुनकर सब कोई खीज उठते हैं। मुखिये ने कई दफ़े आनंद से कहा भी था—"अरे आनंद, तुम आधी रात तक गधे की भांति रेंककर हमें परेशान कर देते हो!" पर कोई भी अगर आनंद के गीत की आलोचना करते तो उसका दिल कचोट उठता था। उन्हीं दिनों में मुखिये के घर एक लड़का पैदा हुआ। वह बच्चा आनंद का गीत सुनकर चौंक पड़ता और चीखकर रोता ही रह जाता।

यह क्रम बराबर चलता रहा। आखिर मुखिये की पत्नी ने आनंद से साफ़ बताया—"अरे आनंद, अगर तुम गीत गाना बंद न करोगे तो कल से काम पर मत आओ।"

मुखिया उस वक़्त वहीं पर था। उसने कहा—"वह तो गीत गाना कभी बंद न करेगा। उसकी तनख्वाह देकर भेज दो।"

आनंद को नौकरी छूट जाने का दुख न था, मगर उसे गाने से मना किया गया था, इस बात का उसे बड़ा दुख हुआ। वह उसी वक़्त मुखिये के घर से निकल पड़ा और जंगल का रास्ता पकड़ लिया।

रामनारायण अग्रवाल

उसने सुन रखा था कि संगीत सुनने पर पेड़-पत्ते, पत्थर और पहाड़, यहाँ तक पशु-पक्षी भी सर चालन करते हैं ।

जंगल के रास्ते चलते-चलते अंधेरा हो गया । आसमान में पूर्ण चन्द्रमा निकल आया । हवा में फूलों की खुशबू फैली थी । आनंद उस वातावरण में अपने को भूल गया । वह एक शिला पर लेट गया और संगीत का आलाप करने लगा ।

वह तब तक गाता रहा, जब तक उसे नींद नहीं आई । उसके संगीत को समीप में रहनेवाली एक राक्षसी ने सुना । उसके विवाह योग्य एक नालायक़ कन्या थी । इस वजह से कोई भी उसके साथ शादी करने को तैयार न हुआ । उसकी माँ के मन में अब एक उपाय सूझा । यह कोई संगीतकार अपने मधुर कंठ से गा रहा है । उसकी बेटी को उस गायक के द्वारा संगीत सिखला दे, तो कम से कम उसके संगीत पर मुग्ध होकर कोई युवक उसके साथ शादी करने को तैयार हो जाएगा ।

आनंद का भर्राया हुआ स्वर राक्षसी को बड़ा नाज़ुक मालूम हुआ । उसके द्वारा अपनी बेटी को संगीत सिखाने का निश्चय कर राक्षसी सोनेवाले आनंद को उठा ले गई और अपनी गुफा में बेटी के सामने खड़ा किया । राक्षसी की लाड़ली बेटी ने कहा– "मनुष्य का मांस मैं पचा नहीं सकती । इसको तुम क्यों ले आई हो, माँ ?"

"अरी बावरी, खाने के लिए नहीं, यह तो संगीत का बड़ा भारी पंडित है । तुम को संगीत सिखला देगा । तुम्हारे गीत सुनकर कई युवक तुम्हारे साथ शादी करने के लिए कतार बांधकर खड़े हो जायेंगे ।" माँ राक्षसी बोली ।

"ओह, मेरी शादी होगी !" चिल्लाते खुशी के मारे छोटी राक्षसी नाचने लगी ।

उस कोलाहल को सुनने पर आनंद की आँखें खुल गईं । वह उन राक्षसियों को देख चीख उठा । बड़ी राक्षसी ने कहा– "तुम डरो मत ! हमने जंगल में तुम्हारा

अपूर्व संगीत सुना है! तुम जैसा गायक दुनिया भर में कोई दूसरा न होगा। मेरी बेटी को संगीत सिखाकर पुण्य लूटो, थैली भरकर सोना तुम्हें पुरस्कार में दे दूंगी।"

इतने दिन बाद अपने संगीत की प्रशंसा सुन आनंद खुशी के मारे उछल पड़ा। उसने कहा—"मनुष्य पशुओं से गये बीते हैं; उन से तुम राक्षस लोग ही कलाओं के प्रति ज़्यादा आदर का भाव रखते हो?"

"तुम जितने दिन चाहोगे, हमारे साथ रहकर मेरी बेटी को संगीत सिखाओ। मैं तुम्हें किसी प्रकार की क़मी न होने दूंगी।" राक्षसी ने आश्वासन दिया।

आनंद ने बड़ी ख़ुशी के साथ मान लिया। अब सवेरा होनेवाला था, इसलिए दोनों राक्षसियाँ सोने को तैयार हो गईं। आनंद दिन भर जंगल में घूमता रहा। फल खाकर गुफ़ा को लौट आया। उसी वक्त दोनों राक्षसियाँ नींद से जाग उठीं।

छोटी राक्षसी न भक्ति पूर्वक आनंद के चरणों का स्पर्श किया, तब विद्याभ्यास करने बैठ गई। आनंद ने उसे एक टेक बताकर उसका आलाप करने को कहा। राक्षसी ने गाया, पर आनंद को लगा कि पहाड़ पर से चट्टानें लुढ़क रही हों और मेघ गरज रहे हों। साथ ही संगीत का अपमान होते देख उसे बड़ा दुख भी हुआ।
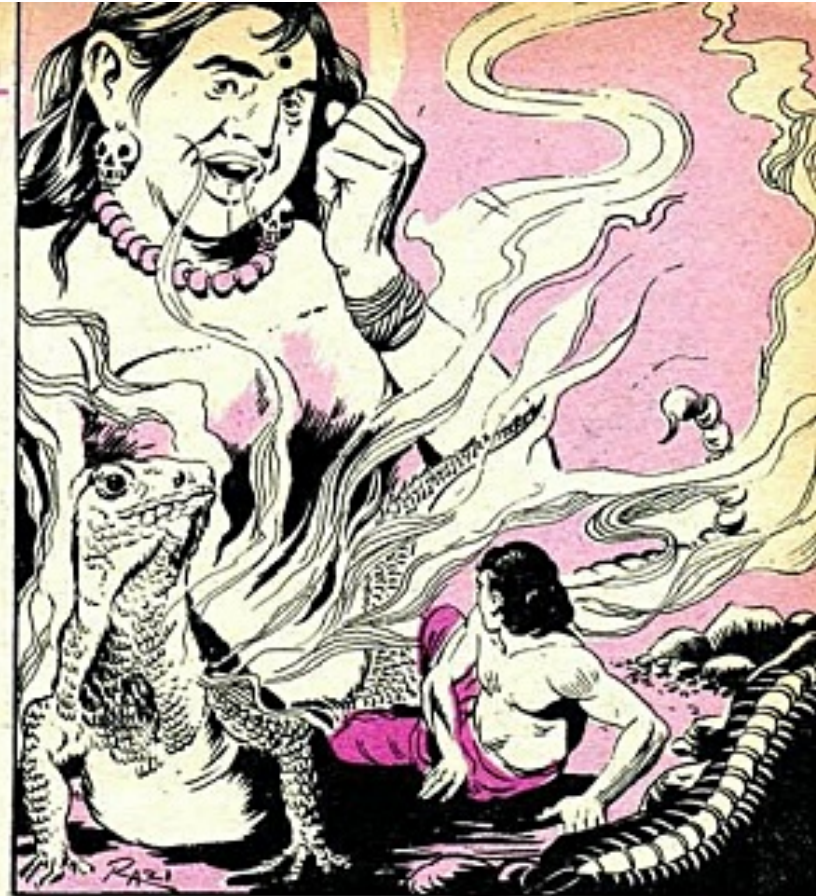
आनंद चिल्ला उठा—"रुक जाओ! गधे की तरह गला मत फाड़ो। धीरे से गाओ।" इन शब्दों के साथ आनंद ने फिर वह गीत गाकर सुनाया।

इस बार छोटी राक्षसी ने और अधिक भीकर स्वर में गाकर सुनाया। उसका गीत सुनने पर आनंद का पेट मचल उठा। फिर भी उसे पूरा गीत सिखाकर आनंद ने सो जाने का उपक्रम किया। छोटी राक्षसी संगीत की साधना कर रही थी, जिससे आनंद की नींद हराम हो गई।

इतने में बड़ी राक्षसी दो हिरणों को मार कर ले आई और बोली—"ओह, यह गीत क्या मेरी बेटी ही गा रही थी! मैंने

सोचा कि कोई कोयल गुफ़ा में घुसकर कूक रही है।" ये शब्द कहते उसने अपनी बेटी का आलिंगन किया और उसका माथा चूम लिया।

उस दिन से वह गुफ़ा आनंद के लिए नरक तुल्य हो गई। राक्षसी के गाते वह सो नहीं पाया। उसका कंठ स्वर सुनने पर आनंद को ऐसा लगता, मानों उसके शरीर पर बिच्छु और सांप लोट रहे हो।

एक दिन आनंद ने साहस करके बड़ी राक्षसी से कहा–"तुम्हारी बेटी का कंठस्वर ठीक नहीं है। उसे संगीत विद्या कभी नहीं आएगी।"

इस पर बड़ी राक्षसी क्रोध में आकर बोली–"गुरू! तुम सतर्क होकर बोलो, आखिर क्या बकते हो? मेरी बेटी संगीत विद्या में तुम से ज्यादा प्रवीण हो गई। इसलिए तुम उससे ईर्ष्या करते हो?"

इसके बाद आनंद कोई जवाब न दे सका। वह मौन रह गया।

उसने समझ लिया कि कला केवल आत्म संतोष के लिए ही नहीं होती, बल्कि उसके द्वारा दूसरों का भी मनोरंजन होना चाहिए। खासकर संगीत! क्यों कि अन्य कलाओं का अभ्यास दूसरों से छिपकर किया जा सकता है। संगीत दूसरों को भी सुनाई देता है। ऐसी हालत में गायक का स्वर कर्ण कठोर होता है तो श्रोताओं को बड़ा कष्ट होता है। फिर उसने सोना पाने की भी चिंता नहीं की, उस दिन राक्षसियों को सोते देख आनंद गुफ़ा को छोड़ मुखिये के घर लौट आया।

"अबे, तुम फिर आ गये?" मुखिये और उसकी पत्नी ने पूछा।

आनंद ने उन्हें सारा वृत्तांत सुनाकर कहा–"मेरी अक़्ल ठिकाने लग गई। मैंने अपनी भूल समझ ली है। इस वक़्त मैं काम करने आया हूँ, गीत गाने के लिए नहीं!"

इसके बाद फिर उसने कभी गीत नहीं गाये। मगर उसे "राक्षसी का गुरु" नामक नई उपाधि मिल गई।
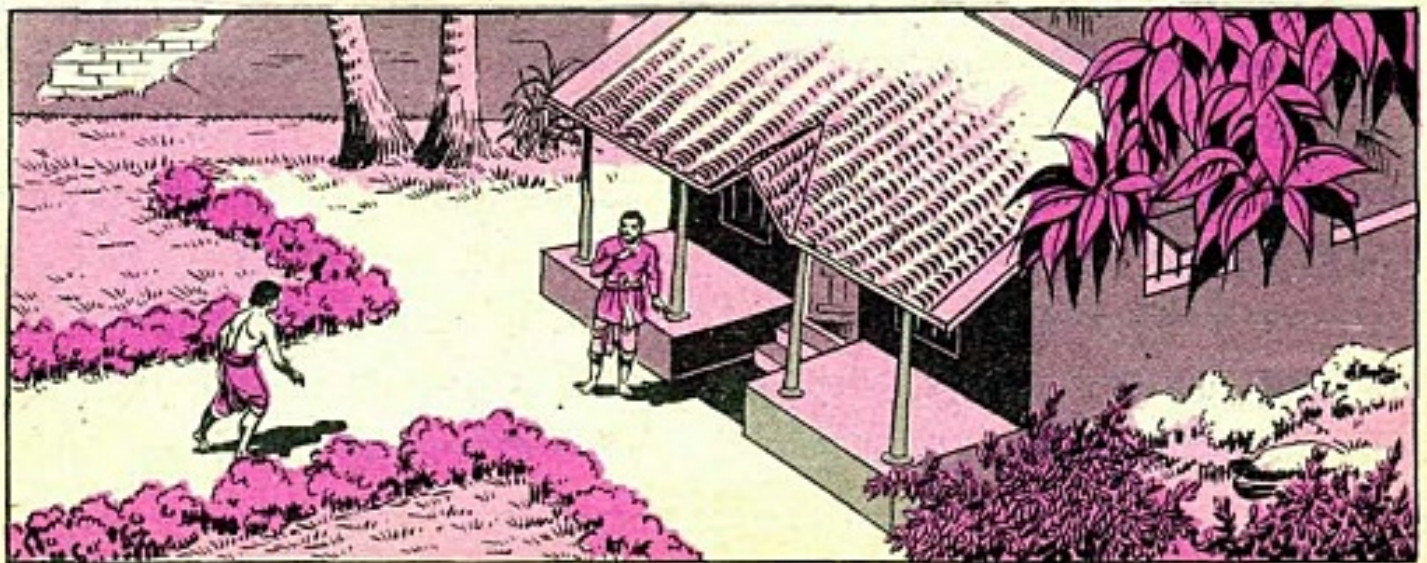
प्रतीति है कि शर्वाति नामक राजा के हज़ारों की संख्या में पत्नियाँ थीं। उन सबके एक ही पुत्री सुकन्या थी, इस वजह से वह अमित लाड़-प्यार में पली।

राज महल के बाहर एक सुंदर तड़ाग के समीप मे च्यवन नामक एक भृगुवंशी व्यक्ति अंबा के प्रति घोर तपस्या कर रहा था। उसके चारों तरफ़ बांबियाँ निकल आईं और बेल फैल गईं।

एक बार शर्वाति उस तड़ाग के समीप अपनी पत्नियों के साथ टहलने गया। उनके साथ गई सुकन्या तितली की भांति इधर-उधर दौड़ते, फूलों का चयन करते अपनी सखियों के साथ टहल रही थी। इतने में उसकी दृष्टि च्यवन की बांबी पर पड़ी। सुकन्या ने चपलतावश उसके भीतर झांककर देखा, उसके अन्दर कोई दो चीज़ें चमकती दिखाई दीं। वह तुरंत कांटों से उन्हें चुभाने को हुई।

इस पर च्यवन ने कहा–"हे लड़की, तुम इस बांबी को मत छेड़ो। दूर हट जाओ। मैं यहाँ तपस्या कर रहा हूँ।"

सुकन्या ने उनकी बातों पर ध्यान न दिया। कांटों से च्यवन की आँखें चुभोकर उसे अंधा बनाया। इसके बाद वह अपनी करनी पर थोड़ी देर के लिए पछताई, पर तुरंत उस बात को भूलकर खेलों में निमग्न हो गई।

च्यवन उस पीड़ा को सहन न कर पाया। वह रोने लगा। उसी वक़्त राजा

और उसके परिवार के लोगों के लिए मल-मूत्र बंद हो गये। सब को एक साथ ऐसा हुआ, जैसे शाप लग गया हो, इस पर आश्चर्य चकित हो राजा शर्याति अपने महल को लौट गया। अपने सैनिकों को आदेश दिया—"हमारे नगर के समीप में च्यवन नामक एक वृद्ध व्यक्ति तपस्या कर रहे हैं। किसी ने उन्हें तो कष्ट नहीं पहुँचाया? उसका पता लगाओ।"

सैनिकों ने बताया कि हमें इसकी जानकारी नहीं है। इस पर राजा सच बताने के लिए उन्हें सताने लगा।

यह बात सुकन्या ने सुनी, तब कहा—"पिताजी, जब मैं वन-विहार कर रही थी, तब मुझे एक बांबी दिखाई दी। उसमें दो छेद थे। उनमें से दो कांतियों को फूटते देख मैंने कांटों से चुभो दिया। तब उनमें से पानी गिरने लगा। उसी वक़्त कोई क्षीण आर्तनाद मुझे सुनाई दिया। इस पर चकित हो मैं वहाँ से चली आई।"

राजा ने सोचा कि महामुनि के प्रति यह अपचार हुआ होगा। राजा उसी समय च्यवन के पास दौड़कर पहुँचा। बांबी को हटाकर च्यवन के चरणों में गिर कर निवेदन किया—"महात्मा, अज्ञानतावश मेरी पुत्री ने आप के प्रति जो अत्याचार किया है, इस पर क्रोध न कीजिएगा। आप जैसे तपस्वियों के लिए क्रोध करना उचित नहीं है।"

च्यवन ने कहा—"राजन, तुम्हारी पुत्री ने मेरी आँखें चुभो दीं, इस कारण आप के दिल को दुख पहुँचा है। बस, मैंने आप को कोई शाप नहीं दिया। मगर किसी की हानि पहुँचाये बिना तपस्या करनेवाले को हानि पहुँचाने का फल व्यर्थ नहीं जाएगा? क्या ईश्वर क्रोधित न होंगे? मैं वृद्ध हूँ। अब अंधा भी हो गया हूँ। मेरी सेवा-टहल कौन करेगा?"

राजा ने कहा—"महामुनि, मैं आप की सेवा के लिए अनेक सेवक भेज दूंगा। वे

सब तरह से आप की सेवा-शुश्रूषा करेंगे। आप कृपया क्रोध न रखियेगा।"

इसके उत्तर में मुनि ने कहा–"राजन, मैं तो अंधा हूँ। मेरी निष्ठा कैसे क़ायम रहेगी? आप के सेवक मेरी सेवा क्या कर सकते हैं? मेरी सेवा करने के लिए आप अपनी कन्या का विवाह मेरे साथ कीजिए। मैं मुनि हूँ; इसलिए आप को संकोच करने की ज़रूरत नहीं है।"

यह बात सुनकर राजा शर्याति चिंता में डूब गया, पर वह मुनि के प्रश्न का कोई उत्तर न दे पाया। वह सोचने लगा–'बूढ़ा, अंधा और जंगली च्यवन अत्यंत नाज़ुक राजकुमारी सुकन्या को कैसे सुखी बना सकता है? सुकन्या ऐसे पति के साथ कैसे गृहस्थी चला सकती है?"

यों विचार कर शर्याति अपने महल को लौटकर मंत्रियों से बोला–"देखते हो न, उस महामुनि च्यवन की शर्त! वह मेरी पुत्री के साथ विवाह करना चाहता है, अन्यथा हमें मल-मूत्रों के स्तम्भित होने से यातनाएँ झेलनी पड़ेंगी।"

मंत्रियों ने समझाया–"महाराज, सुकन्या का विवाह मुनि के साथ करना हमें भी पसंद नहीं है।"

उसी वक़्त सुकन्या वहाँ पर आई। सारी बातें जानकर बोली–"पिताजी, मेरे वास्ते आप सब को यों कष्ट झेलना मुझे कदापि पसंद नहीं है। मेरी गलती की वजह से ही तो वह मुनि अंधे हो गये हैं। मैं उनकी दया प्राप्त करूँगी, आप सब सुखी रहियेगा।"

राजा ने व्यथित होकर कहा–"बेटी, तुम उस अंधे व बूढ़े च्यवन की जंगल में परिचर्याएँ कैसे कर सकती हो? मैं अपने सुख के वास्ते तुम्हें मुनि के हाथ सौंप दूं? तुम्हारे द्वारा जंगल में उस वृद्ध पति के साथ गृहस्थी चलाने का आदेश दूं तो क्या मुझे रौरव नरक प्राप्त न होगा? बेटी मैं और मेरे राज्य के लिए चाहे जो भी विपत्ति आवे, मुझे चिंता नहीं, लेकिन मैं

इसके बाद च्यवन तथा सुकन्या का विवाह शास्त्र-विधि से संपन्न हुआ । राजा और सैनिकों का रोग निवारण हुआ । जब शर्याति लौटने को हुआ, तब सुकन्या ने अपने सारे गहने अपने पिता के हाथ सौंप दिया और अपने लिए मृग चर्म और वल्कल देने को कहा ।

जंगल में सुकन्या ने नया जीवन प्रारंभ किया । वह जंगल से कंद, मूल व फल लाती, यज्ञ के वास्ते समिधियाँ जुटाती, तिल और दाभ लाकर कमण्डलु के साथ एक ओर रख देती, तब अपने पति को गरम पानी से नहलाती, चर्म बिछाकर नित्य कर्म के लिए सारी तैयारियाँ करती, अंत में अपने पति का हाथ पकड़कर ले जाती, खाना खिलाती । खाने के बाद उसके हाथ-पैर धो डालती, तब वह खाना खाकर अपने पति के पाँव दबाती । उसका पति जहाँ भी जाना चाहता तो उसका हाथ पकड़कर ले जाती । यों वह भक्ति और श्रद्धा के साथ अपने पति की सेवा में अपने दिन काटने लगी ।

एक दिन सुकन्या तालाब में नहाकर लौट रही थी, उस समय अश्विनी देवता उसके सौंदर्य को देख आश्चर्य में आ गये और उसके समीप जाकर बोले—"हे रमणी, थोड़ा रुक तो जाओ । हम तो

अपने हाथों से तुमको उस अंधे मुनि के हाथ सौंप नहीं सकता ।"

इस पर सुकन्या ने समझाया—"पिताजी, वे मुनि असाधारण व्यक्ति हैं । वे वृद्ध हुए तो क्या हुआ ? मैं उनकी सेवा करूँगी । मैं सुख की कामना नहीं करती, मेरे कारण आप सब सुखी हों, क्या यह बात कम महत्व की है ?"

सुकन्या का दृढ़ संकल्प देख राजा तथा मंत्री भी आश्चर्य में आ गये । इसके बाद शर्याति मुनि के पास पहुँचा, प्रणाम करके बोला—"मुनिवर, मैं अपनी पुत्री का आप के साथ बिवाह करूँगा । आप कृपया अनुग्रह करके इसको ग्रहण कीजिए ।"

अश्विनी देवता हैं। तुम कहाँ से आती हो? और कहाँ जा रही हो? तुम्हारे पति और पिता कौन हैं? क्या तुम राजकुमारी हो या कोई अप्सरा? हम तुम्हारी झूठी तारीफ़ नहीं कर रहे हैं।"

उनकी बातें सुनकर सुकन्या लजा गई और बोली—"महानुभाव, मैं राजा शर्याति की पुत्री हूँ। आदरणीय च्यवन की पत्नी हूँ। वे वृद्ध और अंधे हैं। मैं उनकी सेवा किया करती हूँ। मेरी इच्छा के अनुसार ही मेरे पिताजी ने उनके साथ मेरा विवाह किया है। सामने दिखाई देनेवाला वह आश्रम उनका है। आप कोई दयालू मालूम होते हैं।"

ये बातें सुन अश्विनी देवताओं ने कहा—"उस अंधे वृद्ध के साथ किस विचार से तुम्हारे पिता ने तुम्हारा विवाह किया? तुम जैसी रूपवती नारियाँ देवता-स्त्रियों में भी नहीं हैं। तुम उस अंधे की पत्नी बनकर कैसे रह रही हो? तुम अपनी अवस्था के किसी सुंदर युवक को क्यों नहीं वर लेती? ऐसा करने पर तुम सारा जीवन सुख भोग सकती हो।"

इसके उत्तर में सुकन्या ने कहा—"आप तो सूर्य-पुत्र हैं। आप से कोई बात छिपी नहीं है। पराई नारी के साथ क्या आप लोग ऐसी बातें कर सकते हैं? मैं कुल वधू हूँ। आप बढ़-चढ़कर बात करेंगे तो आप को शाप देने की मैं शक्ति रखती हूँ।" यों सुकन्या ने अपना क्रोध प्रकट किया।

सुकन्या के वचन सुनकर अश्विनी देवता डर गये, उसको शांत करने के ख़्याल से बोले—"शील-स्वभाव के मामले में तुम लीलावती से भी महान हो। तुम कोई वर मांग लो, हम उसकी पूर्ति करेंगे।"

इस पर अश्विनी देवताओं ने उसे एक मौक़ा दिया। वह यह कि च्यवन को उन्हीं के बराबर सुंदर और युवा बनायेंगे, पर ऐसी हालत में एक ही रूप में स्थित उन तीनों में से एक को सुकन्या अपने पति के रूप में वर लेगी।

इसके बाद सुकन्या अपने आश्रम को चली गई। अश्विनी देवताओं की सारी बातें च्यवन को सुनाकर उनकी राय मांगी।

च्यवन ने अश्विनी देवताओं के कहे अनुसार करने की अनुमति दी। तब सुकन्या उन्हें अपने आश्रम में ले आई।

च्यवन को अगर युवक होना है तो उसे जल में डुबकी लगाना है। च्यवन ने यह शर्त मान ली। इसके बाद तीनों तालाब में डूब गये और थोड़े क्षण बाद एक ही रूप में बाहर आये। उनमें से सुकन्या को अपनी पसंद के एक युवक को चुनना है।

सुकन्या ने अपने मन में सोचा कि जगदांबा ही उसके लिए शरण्य है। उसने अंबा का ध्यान किया। अंबा ने सुकन्या पर अनुग्रह करके उसे दिव्य ज्ञान प्रदान किया। इस पर सुकन्या को मालूम हो गया कि उसका पति कौन है? उसने अपने पति को ही चुना। इस पर अश्विनी देवताओं ने उसके शील की प्रशंसा की।

च्यवन मुनि ने भी अश्विनी देवताओं की प्रशंसा करते हुए कहा—"आप लोगों की कृपा से मुझे यौवन के साथ आँखें भी प्राप्त हुई हैं। मैं सुंदर भी बन गया हूँ। पर इस उपकार का मुझे भी प्रत्युपकार करना है। इसलिए आप बताइये, मेरे द्वारा क्या चाहते हैं?"

अश्विनी देवताओं ने कहा—"महानुभाव, यह बताकर हमें यज्ञ के समय सोमपान करने के हक़ से वंचित किया गया है कि हम चिकित्सा करनेवाले हैं। यदि आप को कोई आपत्ति न हो तो हमें वह हक़ दिलवा दीजिए।"

च्यवन ने बताया—"मैं राजा शर्याति के द्वारा यज्ञ करवाकर आप लोगों को सोम रस दिलाऊँगा।"

इस पर अश्विनी देवता संतुष्ट हो चले गये। यौवन को प्राप्त च्यवन सुकन्या के साथ अपने आश्रम को लौट आया।

एक दिन शर्याति की पत्नी के मन में यह चिंता पैदा हो गयी कि उसकी पुत्री

सुकन्या न मालूम उस वृद्ध और अंधे पति के साथ कैसे दिन काटती है। उसी समय राजा शर्याति के मन में भी अपनी बेटी को देखने की इच्छा पैदा हो गई। दोनों रथ पर सवार हो च्यवन के आश्रम में पहुँचे। वहां पर सुकन्या के साथ एक सुंदर युवक उन्हें दिखाई दिया। शर्याति यह सोचकर विकल हो उठा कि उसकी पुत्री ने यौवन के उद्रेक में आकर अपने बूढ़े पति का बध करके किसी युवक को वर लिया है।

मगर सुकन्या ने अपने पिता की चिंता को दूर करते हुए सारा वृत्तांत उसे सुनाया। च्यवन ने अश्विनी देवताओं को जो वचन दिया है, यह बात राजा शर्याति को बताई। अपने जामाता के वास्ते शर्याति ने यज्ञ करने का संकल्प किया। यज्ञ भूमि के पास देवताओं के साथ इन्द्र तथा अश्विनी देवता भी आ पहुँचे।

इसके बाद च्यवन अश्विनी देवताओं को जब सोम रस देने लगा, तब इन्द्र ने मना करते हुए कहा—"ये लोग वैद्य वृत्ति करनेवाले हैं, इसलिए सोमपान करने की अर्हता नहीं रखते।"

"इन्हें सोम दिलाने के लिए ही मैंने इस राजा के द्वारा यज्ञ करवाया है। आप देखते ही रह जाइयेगा कि मैं इन्हें सोम कैसे देता हूँ?" च्यवन ने अश्विनी देवताओं के हाथ सोम देते हुए उत्तर दिया।

इस पर इन्द्र नाराज़ हो गये। उन्होंने च्यवन का वध करने के लिए अपना बज्रायुध उठाया। च्यवन ने अपनी तपस्या की शक्ति से उसे रोका। कृत्य की सृष्टि करके इन्द्र का संहार करने के लिए होम किया। भयंकर आकृति के साथ कृत्य ने अग्निकुंड में अविर्भाव लिया। उस अवतार को देख इन्द्र और देवता कांप उठे।

देवता गुरु बृहस्पति ने इंद्र को सलाह दी—"आप च्यवन की शरण मांग लीजिए। वही उसे नियंत्रण में रख सकते हैं।" इन्द्र ने च्यवन की शरण माँगी और अपने प्राण बचाये।

नालायक़ बेटे

एक गाँव में एक धनवान था। उसके चार पुत्र थे। चारों किसी काम के न थे, बल्कि नालायक़ थे। वे बड़े हुए, फिर भी उनका व्यवहार बच्चों के जैसा था। किसी जिम्मेदारी का अनुभव नहीं करते थे। उनके व्यवहार को देख पिता ने निश्चय किया कि उन पर थोड़ी जिम्मेदारियों का बोझ डालकर जीने का रास्ता दिखावे। इस विचार से एक दिन उसने अपने बड़े बेटे को बुलाकर कहा– "तुम अपने मामा के गाँव जाकर वहाँ के कुशल-समाचारों का पता लगा लाओ।"

दूसरे दिन सवेरे जब बड़ा बेटा अपने मामा के गाँव को जाने को तैयार हुआ, तब माँ ने समझाया–"बेटा, देखो, उस गाँव में आग और पानी नहीं मिलते! याने कोई सुविधा नहीं है, तुम ज्यादा दिन वहाँ न रहो, जल्दी वापस आ जाओ। तुम्हारे मामा लोग चार-पाँच दिन रुक जाने को बतायेंगे तो उनसे कह दो कि ज़रूरी काम है, जल्दी अपने गाँव लौटना है।"

बड़ा बेटा सब की आँख बचाकर दो मटके कहीं से ले आया, एक में थोड़ी-सी आग और दूसरे में पानी डालकर मामाओं के गाँव की ओर चल पड़ा। थोड़ी दूर जाने पर उसे लगा कि दो मटके ढोना मुश्किल है, इसलिए उसने आगवाले मटके में पानी डाल दिया, वह खाली मटका फेंककर आगे बढ़ा। अब बोझ कम हो गया था, इसलिए उसकी यात्रा अच्छी चली। वह जल्दी ही अपने मामाओं के गाँव पहुँचा। उसे देखते ही मामाओं ने पूछा–"अरे, वह मटका कैसा?"

"मैंने सुना है कि आप के गाँव में आग और पानी नहीं मिलते। इसलिए साथ ले आया हूँ।" बड़े ने कहा।

२५ साल पूर्व चन्दामामा की कहानी

"तो आग कहाँ?" मामाओं ने पूछा।

"पानी के अन्दर है।" भानजे ने जवाब दिया।

उसके भोलेपन पर सभी मामा हँस पड़े, फिर जब उसे अपने गाँव वापस भेजने लगे तब समझाया—"बेटे, यह दुनिया पाप से भरी है। तुम कभी अकेले घर से मत निकलो।"

उसने घर लौटकर सारी बातें अपने पिता को सुनाईं। पिता ने उसके प्रति अपनी सारी आशाएँ छोड़ दीं, तब दूसरे बेटे को बुलाकर बोला—"बेटा, तुम इस साल खुद मजदूरों के साथ रहकर खेतीबाड़ी का काम देख लो।"

"अच्छी बात है, बाबूजी!" यों कहकर दूसरा बेटा चला गया। उस दिन से वह खेत में ही झोंपड़ी बनाकर खेतीबाड़ी का काम देखने लगा। उन खेतों में ज्यादातर तिल पैदा करते हैं। वह मौसम तिल बोने का था। इसलिए मजदूरों ने तिल के बोरे खोलकर तैयार रखा।

दूसरे बेटे को कुछ न सूझा तो वह कच्चा तिल मुट्ठी में भरकर खाने लगा। इसे देख एक किसान ने उसे समझाया—"कच्चा तिल क्यों खाते हो? भुनाकर खा लो।" इसके बाद उसने सेर भर भूनकर उसे सौंप दिया। उसने भुने हुए तिल खाया, उसके स्वाद पर विस्मय में आकर मजदूरों से बोला—

"देखो, तुम लोग इन बोरों के सारे तिल भून दो।"

"तो बीज बोने के लिए तिल कहाँ से आयेंगे?" मजदूरों ने पूछा।

"तुम लोग इसकी चिंता क्यों करते हो? मैं जो बताता हूँ, सो करो।" किसान के बेटे ने आदेश दिया।

इस पर मजदूरों ने सारे तिल तवों पर डालकर भून दिये। तब किसान के बेटे ने समझाया—"तुम लोग इन भुने हुए तिलों को ले जाकर खेत में बो दो। स्वादिष्ट तिल पैदा होंगे। तुम लोग इतने वर्षों से खेतीबाड़ी करते हो, पर तुम लोग कच्चे तिल बोकर कच्चे तिल पैदा करने से बढ़कर कुछ नहीं जानते।" दूसरे बेटे ने मजदूरों की खिल्ली उड़ाई।

मजदूरों ने धनवान के पास जाकर सारा समाचार सुनाया। धनी ने सर पीटकर दूसरे बेटे को अपने यहाँ बुलवा लिया।

उसी गाँव के एक कोने में धनवान का मवेशीखाना था। उसकी देखभाल करने की जिम्मेदारी धनी ने अपने तीसरे बेटे को सौंप दी।

थोड़े दिन वहाँ बिताने के बाद तीसरे बेटे के दिमाग में कोई उपाय सूझा। उसने उसी वक़्त सारे नौकरों को बुलाकर आज्ञा दे दी—"सुनो, एक महीने के अन्दर संक्रांति पर्व आनेवाला है। तुम लोग एक महीने तक किसी गाय या भैंस का दूध

मत दुहो। संक्रांति के दिन एक साथ सारे दूध दुहकर ज्यादा दाम पर बेच देंगे।"

ये बातें सुन कुछ नौकर हँस पड़े। कुछ लोगों ने समझाया—"सरकार, ऐसा नहीं किया जाता। जिस दिन का दूध उसी दिन दुह लेना चाहिए।"

इस पर किसान का बेटा झल्लाकर बोला—"तुम लोग मेरे कहे मुताबिक़ करो। इन मवेशियों का मालिक मैं हूँ या तुम लोग?"

इस पर नौकरों ने उस दिन से पशुओं के दूध दुहना बंद किया। संक्रांति तक सारी गायें और भैंसें सूख गईं। दुहने पर दूध निकलता न था। तब मवेशियों के चरवाहों ने सारा समाचार अपने बड़े मालिक को सुनाया। उसने अपने तीसरे बेटे को भी घर बुलवा लिया।

अब धनवान की सारी आशाएँ अपने चौथे बेटे पर केंद्रित हो गईं। वास्तव में वह अन्य तीनों बेटों से थोड़ा अक़लमंद-सा लगा। इसलिए धनवान ने उसे कोई निश्चित काम न देकर बस यही पूछा—"बेटा, बताओ, तुम क्या करना चाहते हो?"

"बाबूजी, मैं व्यापार करना चाहता हूँ।" आखिरी बेटे ने जवाब दिया।

"तब तो तुम्हें दो हज़ार रुपये दे देता हूँ। इससे व्यापार करके धन कमाकर ले आओ।" पिता ने कहा।

अपने पिता से दो हज़ार लेकर आखिरी बेटा शहर में चला गया। वहाँ पर उसने तरह-तरह की चीज़ों का सौदा किया, आखिर चंदन की लकड़ी खरीदकर गाड़ी पर लादकर चल पड़ा।

वह कई प्रदेशों में गया, पर उसका माल नहीं बिका। आखिर एक गाँव में पहुँचकर वहाँ के लोगों से पूछा—"भाइयो, यह बताओ, इस गाँव में किस चीज़ की ज्यादा मांग है?"

"उफ़, क्या बतावें? इस गाँव में कोयल की जो मांग है, वह और किसी चीज़ की नहीं है।" गाँववालों ने बताया।

"वाह, तुम लोगों ने खूब बताया।" यह कहकर उसने गाड़ी से चन्दन की लकड़ी उतरवा दी, उसे जलाकर कोयला बनवाया। उसी वक़्त उसे दस रुपयों में बेच डाला। इसके बाद वह दूसरे गाँव में पहुँचा, वहाँ के लोगों से पूछा–"यहाँ पर कौन सा माल सस्ता बिकता है?"

"रूई तो यहाँ बड़ी सस्ती बिकती है?" गाँववाले ने बताया।

आखिरी बेटा दस रुपयों की रूई खरीदकर गाड़ी पर लादकर शहर में पहुँचा। माल देखकर व्यापारियों ने कहा– "भाई साहब, हम यह माल ज़रूर खरीद लेते, मगर यह साफ़ नहीं है।" इस पर चौथे बेटे को मालूम हो गया कि यह रूई कहीं बिकनेवाली नहीं है।

उसकी समझ में न आया कि क्या करना चाहिए! वह निराश हो गाड़ी को चलवाते आगे बढ़ा। वह थक गया था, इसलिए थोड़ी देर आराम करने के ख्याल से सोच ही रहा था कि कहाँ पर जाये, तभी एक मकान के सामने एक चबूतरा देख उस पर बैठ गया।

उसी चबूतरे पर एक ओर एक सुनार भाती में सोना रखकर नली से फूँक लगा रहा था।

"सुनार साहब, आप यह क्या कर रहे हैं?" धनवान के आखिरी बेटे ने पूछा।

"महाशय, आग में सोना तपाकर उसे साफ़ कर रहा हूँ।" सुनार ने कहा।

धनवान के आख़िरी बेटे के मन में उत्साह उमड़ पड़ा। उसने उसी वक़्त रूई के बोरे गाड़ी से उतरवा दिया। होमकुंड जैसा एक विशाल कुंड बनवाया। रूई को साफ़ करने के लिए सारे रूई के बोरों को उस कुंड में डलवाकर आग लगवा दी।

फिर क्या था, धक्-धक् करते रूई जलकर भस्म हो गई। इसके साथ धनवान के आखिरी बेटे का व्यापार भी समाप्त हो गया। साथ ही धनवान ने अपने बेटों पर जो बहुत सारी आशाएँ लगाये रखी थीं, उन पर पानी फिर गया।

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ नवम्बर १९८० के अंक में प्रकाशित की जायेंगी ।
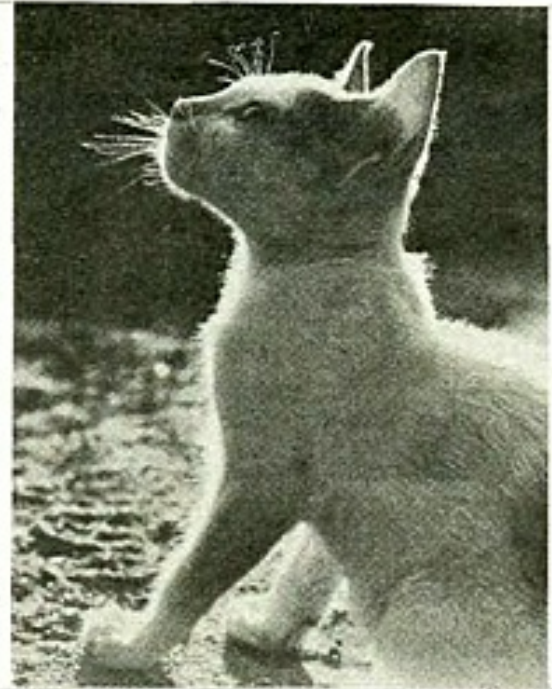
Brahmdev

★

N. Pakkirisamy

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों ।

★ सितम्बर १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा ।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा ।

★ दोनों परिचयोक्तियाँ कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें : चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

जुलाई के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : **मुस्कान हमारा सच्चा धन !**

द्वितीय फोटो : **अपना भी यहाँ लगता न मन !!**

प्रेषिका : **श्रीमती संध्या दुबे,** ४५, कृष्णपुरा, देवास (म. प्र.) ४५५००२

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी ।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

अपनी आँखें बंद करो और जो चाहो माँगो
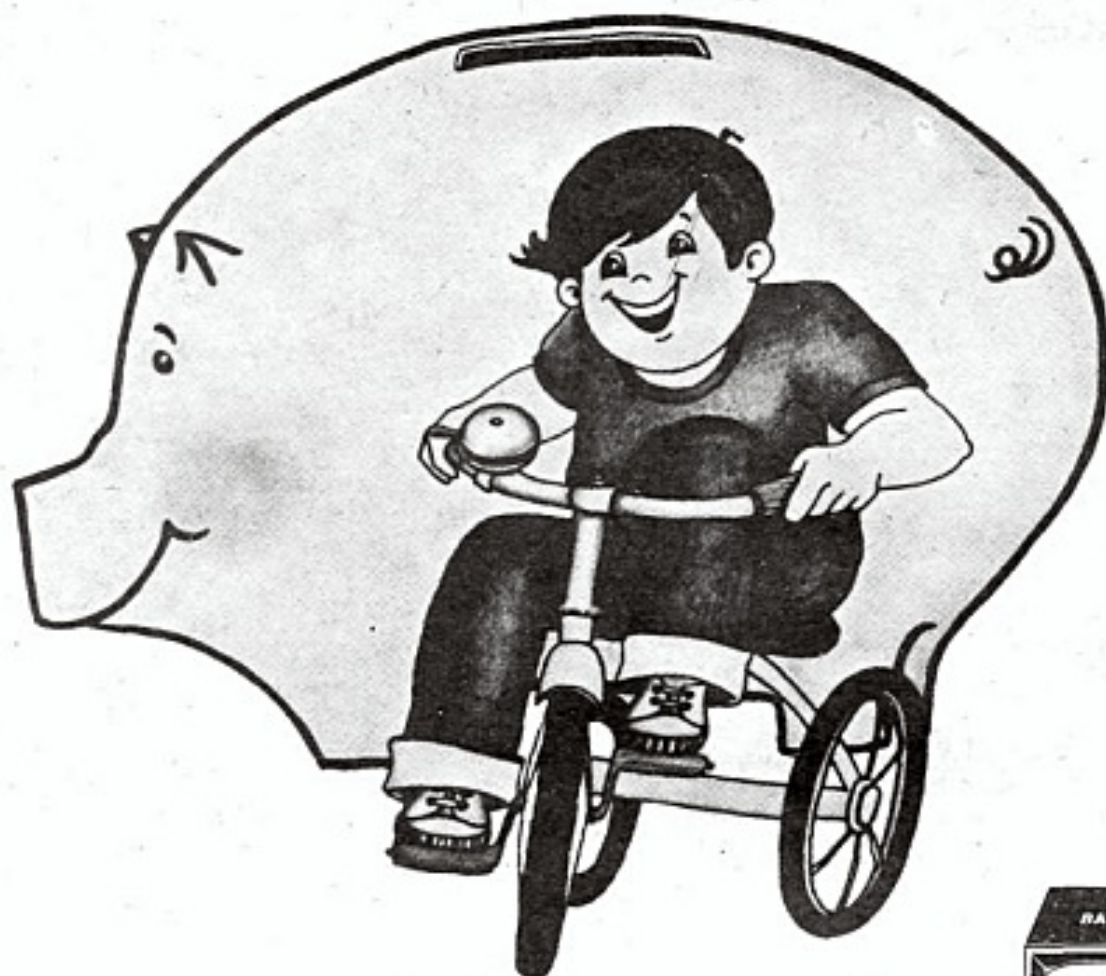
तुम जो चाहोगे, वो मिलेगा बशर्ते बचत करो. तुम खुद अपने पैसों से साइकिल, खिलौने या गुड़िया, जो चाहो खरीद सकते हो. केनरा बैंक की बालक्षेम जमा योजना तुम्हारे लिए ही है.

बालक्षेम के सुंदर से चाबीवाले गुल्लक में तुम पैसे जमा करते जाओ– भर जाने पर केनरा बैंक में जाकर अपने पैसे जमा करा दो. और फिर गुल्लक भरना शुरू कर दो. तुम्हारी रकम बढ़ती ही जायेगी क्योंकि हम उसमें पैसे मिलाते जायेंगे. जल्द ही इतनी रकम जमा हो जायेगी कि तुम मनचाही चीज़ें खरीद सकोगे.

अधिक जानकारी के लिए केनरा बैंक की अपनी नज़दीकी शाखा में चले आओ. हमारी अन्य विशेष योजनाएं हैं :

कामधेनु, विद्यानिधि और निरन्तर.

BALAKSHEMA

CANARA BANK

बालक्षेमा जमा योजना

केनरा बैंक

GROWING TO SERVE · SERVING TO GROW · CANARA BANK

(एक राष्ट्रीयकृत बैंक)

देशभर में 1,200 से भी अधिक शाखाएँ.

maa CB 4 Hin 80

चन्दामामा-कैमल रंग प्रतियोगिता

निःशुल्क प्रवेश

इनाम जीतिए

कैमल-पहला इनाम १५ रु.
कैमल-दूसरा इनाम १० रु.
कैमल-तीसरा इनाम ५ रु.
कैमल-आश्वासन इनाम ५
कैमल-सर्टिफिकेट १०

बिन्दुदार रेखा के साथ काटिये

केवल १२ वर्ष तक के विद्यार्थी प्रतियोगितामें शामिल हो सकते हैं। उपर दिये गये चित्रमें अपने मनचाहें कैमल रंग भर दिजिए। अपने रंगीन प्रवेश-पत्र नचि दिये गए पते पर भेजिए P.B. No. 9928, COLABA, Bombay-400 005.

परिणाम का निर्णय अन्तिम निर्णय होगा। और कोई भी पत्रव्यवहार, नहीं किया जाएगा।

Name.. Age..................

Address..

कृपया अपना नाम और पता अंग्रेज़ी में लिखिए।

Vision

CONTEST NO.16

कृपया ध्यान रखिए कि पूरा चित्र पेंट किया जाये।

चित्र भेजने की अंतिम तारीख: *30-9-1980*

कैम्पा का आरेंज* स्वाद....
पीजिए, मज़ा ऐसा कि याद कीजिए
कैम्पा से ज़िंदगी में मौजबहार, इसमें अब आरेंज* स्वाद की हलचल जगाइए, कैम्पा पीजिए, पिलाइए. मौजमस्ती का रंग, मौजमस्ती का स्वाद—कैम्पा आरेंज* स्वाद. ज़िंदगी की प्यास अधूरी, कैम्पा आरेंज* स्वाद से कीजिए पूरी—इन सभी रंगारंग प्यासे लोगों की तरह...अभी.
*आर्टिफ़िशियल फ्लेवर
Campa
आरेंज स्वाद
OBM/4639
Campa
Campa

CHANDAMAMA (Hindi) SEPTEMBER 1980 Regd. No. M. 5452